जन्म पत्री स्वयं बनाइए

शुद्ध जन्म पत्री ही
सही भविष्य जानने का आधार

ॐ

जन्मपत्री स्वयं बनाइए

लेखक

डॉ० सुरेश चन्द्र मिश्र

आचार्य, एम० ए०, पी०-एच डी०
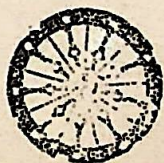
रंजन पब्लिकेशन्स

१६, अन्सारी रोड, दरियागंज

नई दिल्ली-११०००२

प्रकाशक :
रंजन पब्लिकेशन्स
१६, अन्सारी रोड, दरियागंज,
नई दिल्ली-११०००२
फोन : 278835

प्रथम सस्करण १९८६

मूल्य : रु० १०.००

मुद्रक :
गोयल प्रिंटर्स,
दिल्ली-११००३२

दो शब्द

यह बड़ी प्रसन्नता का विषय है कि आजकल शिक्षित समुदाय भी ज्योतिष जैसे शास्त्र के अध्ययन, मनन तथा प्रयोग में रुचि लेने लगा है। वास्तव में ज्योतिष एक विज्ञान है। इसका साक्षात्कार व प्रत्यक्ष अनुभव तपः पूत ऋषियों व ऋषितुल्य मेधा सम्पन्न आचार्यों ने अपनी स्वयं सिद्ध प्रज्ञा से बहुत पुराने काल में ही कर लिया था। हजारों वर्षों से निरन्तर इस क्षेत्र में नित्य नूतन अनुसन्धान होते आए हैं तथा आचार्यों ने इस शास्त्र की आधुनिकता, सामयिकता तथा प्रत्यक्ष प्रयोगधर्मिता को समय-समय पर परखते रहने के निर्देश दिए हैं। यही कारण है कि आकाश में स्थित ग्रहों की राशि चक्र में वास्तविक स्थिति को जानने के लिए कई सिद्धान्त अस्तित्व में आए। ध्यान देने योग्य बात है कि प्रत्येक सिद्धान्त को समय-समय पर परखकर उसकी युक्तियुक्तता परखी जाती रही है। जहां शास्त्र का बड़ा उपकार करने वाले ऋषियों व आचार्यों ने अपनी इतनी विशालता का परिचय दिया, वहीं पर ज्योतिष के संरक्षक कहे जाने के अधिकारी समझे जाने वाले एक विशेष वर्ग ने इसे बंद ताले व कुञ्जी का विषय बनाने का भरपूर प्रयत्न किया है। वे इसे अपनी थाती सम[illegible] इसके रहस्य को रहस्य ही बनाए रखकर अपनी स्वार्थ सिद्धि में [illegible] रहे। लेकिन दूसरे लोग भी ज्योतिष जानें, इसकी वास्तविकता व[illegible] निकता पर सार्वजनिक विचार-विमर्श निरन्तर होता रहे, जन स[illegible] को भी इसकी असलियत पता लगे, इस दिशा में किए जा रहे [illegible] को सच्चे शास्त्र-हितैषी व अनुरागी लोग सदा सराहते रहे हैं। [illegible] कुछ वर्षों से भारतीय व पाश्चात्य ज्योतिष के सम्मिलित सिद्धा[illegible] अध्ययन व प्रयोग इस क्षेत्र में होने लगा है। कई आधुनिक सिद्धा[illegible]

तरीकों को आज के ज्योतिः शास्त्रानुरागी विद्यावयोवृद्ध विद्वानों ने भी अपनाया है। वास्तव में ज्ञान के आदान-प्रदान से उसका रूप निखरता है। 'व्यये कृते वर्धत एव नित्यम्'।

इन दिनों प्राचीन परम्परा से पंचांग द्वारा जन्मपत्र आदि बनाने के साथ-साथ आधुनिक पाश्चात्य पद्धति से गणित कर कम्प्यूटर की सहायता से तैयार किए गए लाघव चक्रों के द्वारा कम से कम समय में अधिक शुद्ध निष्कर्ष प्राप्त किए जाने लगे हैं।

प्रस्तुत पुस्तक में पंचांग द्वारा जन्मपत्र बनाने की विधि के साथ-हीं-साथ आधुनिक पद्धति से जन्मपत्र बनाने की विधि को सरल शब्दों में समझाने का प्रयास किया गया है। इसकी सहायता से एक प्रारम्भिक ज्योतिष जिज्ञासु व शिक्षित व्यक्ति सरलता से अपनी या मित्रों, सम्बन्धियों व बच्चों की जन्मपत्री बना सकता है।

शुद्ध जन्मपत्री होना ही वास्तव में शुद्ध फल का आधार है। आज कल कम पढ़े लिखे पंडित लोग नितान्त स्थूल ढंग से कहीं के भी पंचांग से किसी भी स्थान पर पैदा हुए बच्चे की जन्मपत्री बनाकर शास्त्र व शास्त्रानुरागी जनता के साथ सरासर अनजाने में या जानबूझकर धोखा देते हैं। इस पुस्तक की सहायता से बिना पंचांग के आप अपेक्षाकृत शुद्ध जन्मपत्र बना सकेंगे। कम्प्यूटर निर्मित गणित की सरलतम व आधुनिक-पद्धति से सामान्य जोड़ घटा जानने वाला व्यक्ति भी स्वयं थोड़े ही दिनों के अभ्यास से अत्यन्त शुद्ध (जितनी आज तक सम्भव है) जन्म-पत्री बना सकेगा।

जिन जिज्ञासु व ज्ञान पिपासु पाठकों के लाभार्थ यह प्रयत्न किया गया है यदि वे इसके माध्यम से अपनी ललक को शान्त कर सके तो हम कृतार्थ होंगे। सुधीजनों द्वारा किया जाने वाला मार्गदर्शन मेरे लिए प्रेयस्य व श्रेयस्य होगा। और अन्त में इस कामना के साथ कि—

ज्योतिषां वास्तवं शास्त्रं, जनानां मार्गदर्शकम्।
भूतभव्यसमुद्गारि, चर्चां चरतु भूतले॥

प्रदोष, रविवार
30, जून 1985

विदुषां वशंवदः
सुरेश चन्द्र मिश्रः

विषय सूची

ॐ

श्रीगणेशाय नमः

विषय प्रवेश

मनुष्य स्वभावतः जिज्ञासु प्राणी है। अपनी जिज्ञासावृत्ति की शान्ति के लिए वह निरन्तर प्रयत्नशील है। मनुष्य की इसी अन्वेपण परकता के कारण ज्ञान-विज्ञान के नए क्षेत्रों व आयामों का परिचय व गहन अध्ययन सम्भव हो सका है। ज्योतिष शास्त्र भी इसी जिज्ञासावृत्ति का सहज उत्कर्ष है। मनुष्य अपने भविष्य के प्रति उत्सुक रहता है। वह सभी प्रकार के पूर्वाभासों का लोभी है। यही कारण है कि ग्रह, नक्षत्र, ब्रह्माण्ड, तारा, पिण्ड, भचक्र आदि का ज्ञान व अनुसन्धान करने की दिशा में प्राचीन विद्वानों व अन्वेषक आचार्यों ने जो प्रयास किए, उन सब का व्यावहारिक नामकरण **'ज्योतिष शास्त्र'** किया गया। **'ज्योतिषां सूर्यादिग्रहाणां बोधकं शास्त्रम् ज्योतिःशास्त्रम्'** अर्थात् सूर्यादि ग्रहों की गति व प्रभाव आदि के क्रमबद्ध अध्ययन को ज्योतिष शास्त्र की संज्ञा प्रदान की गई। इस शास्त्र के मुख्य रूप से दो भेद किए गए—गणित व फलित।

गणित के अन्तर्गत करण, तन्त्र व सिद्धान्त का ग्रहण होता है तथा फलित ज्योतिष के मूल रूप से पांच भेद माने जाते हैं—होरा, ताजिक, मुहूर्त्त, प्रश्न व शकुन।

फलित ज्योतिष के होरा नामक भेद के अन्तर्गत व्यक्ति की जन्मकुण्डली बनाना तथा तदनुसार फलकथन करना अन्तर्हित किया गया है। यही ज्योतिष भेद वास्तव में हमारे प्रस्तुत विषय से सीधा सम्बन्ध रखता है। जन्म के समय सूर्य आदि ग्रहों व मेषादि राशियों की स्थिति के आधार पर व्यक्ति के सारे जीवन के शुभाशुभ फल का विवेक किया जाता है। ग्रहों के समूह (सौर-मंडल) की गति व स्थिति जब इस विषय में आधार होती है तो यह स्वाभाविक ही है कि हम पहले संक्षेप में राशि चक्र व सौरमंडल तथा अन्य आधारभूत आवश्यक तत्त्वों की जानकारी कर लें।

राशि चक्र (भचक्र)—संस्कृत में 'भ' शब्द का अर्थ राशि या नक्षत्र होता है। इसी कारण राशियों के समूह को 'भचक्र' या राशिचक्र कहा जाता है। यह भचक्र वास्तव में कल्पित वृत्त है। इसी के बीच से सूर्य का संक्रमण पथ (ecliptic) गुजरता है इस कारण इसे क्रान्तिवृत्त (zodiac) भी कहा जाता है। यह वृत्त 360 अंश का विस्तार रखता है। इसके 12 समान भाग हैं जिनमें से प्रत्येक का मान 30 अंश होता है। खचक्र के इसी 30 अंश वाले एक भाग को राशि कहते हैं। 12 राशियां खचक्र की परिधि पर स्थित हैं। यह खचक्र अपनी धुरी पर दिन में एक बार पूर्व से पश्चिम की तरफ घूमता है। इसी भ्रमण के कारण राशियों का उदय व अस्त होता है।

राशियां—भचक्र के 30 अंशात्मक एक भाग को राशि कहते हैं, यह हम बता चुके हैं। इन राशियों की संख्या 12 है तथा इनके नाम इस प्रकार हैं। सुविधा के लिए इन्हें नम्बर व चिन्ह दे रखे हैं—

भारतीय नाम	अंग्रेजी नाम	संख्या	चिह्न
मेष	Aries	1	♈
वृष	Taurus	2	♉
मिथुन	Gemini	3	♊
कर्क	Cancer	4	♋
सिंह	Leo	5	♌
कन्या	Virgo	6	♍
तुला	Libra	7	♎
वृश्चिक	Scorpio	8	♏
धनु	Sagittarius	9	♐
मकर	Capricorn	10	♑
कुम्भ	Aquarius	11	♒
मीन	Pisces	12	♓

ग्रह—भारतीय ज्योतिष के अनुसार ग्रहों की संख्या नौ है। सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि, राहु व केतु। राहु व केतु को छाया ग्रह (Shadowy-Planets) माना गया है। पाश्चात्य ज्योतिर्विदों ने इन दोनों ग्रहों को विशेष स्थान नहीं दिया है। इनका रूप आकाश में प्रत्यक्ष नहीं देखा जाता। पश्चिमी ज्योतिषियों ने इन्हें क्रमशः (Dragon's Head) और (Dragon's tail) कहा है। किन्हीं विद्वानों ने इन्हें (Caput) और (Cauda) नाम भी दिया है।

यहां हम यह भी बताना आवश्यक समझते हैं कि बाद में यूरेनस, नेप्चून व प्लूटो इन तीन ग्रहों को भी पश्चिमी विद्वानों ने मान्यता दी है। भारतीय विचारधारा है कि सौरमंडल के ग्रहों के ऊपर इनकी कक्ष्या बहुत दूर होने के कारण पृथ्वी पर

रहने वाले प्राणियों पर व्यक्तिगत रूप से इनका विशेष प्रभाव नहीं पड़ता। वस्तुस्थिति भी यह है कि अन्तरिक्ष में सैकड़ों हजारों अन्य अज्ञात ग्रह होंगे; लेकिन फल-कथन की दृष्टि से सौरमंडल के सात ग्रहों व राहु-केतु को ही भारतीय विद्वानों ने मान्यता दी है। हमें भी ग्रहों की संख्या नौ ही मानना प्रारंभिक स्थिति में सुविधाजनक होगा। ये नौ ग्रह जन्म-समय की अपनी स्थिति व बल के अनुसार प्राणी पर अपना प्रभाव छोड़ते हैं।

ग्रहों का भ्रमण—उपर्युक्त नौ ग्रहों में से चन्द्र, राहु व केतु को छोड़कर सभी ग्रह सूर्य की परिक्रमा करते हैं। इनका भ्रमण पश्चिम से पूर्व की ओर होता है। जो पृथ्वी से जितना अधिक दूर स्थित है उसका भ्रमण काल भी लम्बा होता जाता है। पृथ्वी के सबसे निकट चन्द्रमा है, यह पृथ्वी की परिक्रमा करता है। इसके बाद क्रमशः बुध, शुक्र, सूर्य, मंगल, बृहस्पति व शनि की कक्ष्या स्थित हैं। यही कारण है कि चन्द्रमा एक राशि को जहां लगभग दो दिन और कुछ घंटों में पूरा कर लेता है, वहीं पर शनि को ढाई साल लग जाते हैं। ग्रहों की औसत भ्रमण गति इस प्रकार है—सूर्य एक अंश प्रतिदिन, अर्थात् एक राशि को पार करने में 30 दिन लगाता है। चन्द्रमा 2 दिन 6 घंटे, मंगल 45 दिन, बुध 27 दिन, बृहस्पति लगभग एक वर्ष, शुक्र लगभग एक मास तथा शनि 30 महीने अर्थात् ढाई साल लगाता है। राहु व केतु 18 महीनों में एक राशि का संक्रमण करते हैं।

यह स्थिति सामान्य परिस्थितियों में बतायी गयी है। सूर्य के निकट उसकी रश्मियों में आ जाने से प्रायः ग्रह अपनी स्वाभाविक गति को छोड़कर तेज या धीमा चलने लगता है। यह स्थिति बुध पर अधिकतर लागू होती है।

सूर्य से शनि तक सातों ग्रहों का भ्रमण-क्रम राहु व केतु से थोड़ा भिन्न होता है। राहु व केतु सदा पीछे की ओर अर्थात्

मीन, कुम्भ, मकर इस क्रम से चलते हैं। पारिभाषिक ढंग से ऐसे ग्रहों को वक्री ग्रह कहते हैं। इनके अतिरिक्त मंगल से शनि तक के पांच ग्रह स्थिति के अनुसार मार्गी (सीधी गति) या वक्री (उल्टी गति) से चलते हैं। सूर्य व चन्द्रमा कभी वक्रगति से नहीं चलते। इन ग्रहों (सात) को क्रमशः बारह राशियों का स्थायी अधिपति माना गया है। चाहे वे अपने गोचर (Transit) में किसी भी राशि में स्थित हों, लेकिन इनका निम्नलिखित राशियों पर स्वामित्व बना रहेगा—

ग्रह	राशि
सूर्य	सिंह
चन्द्रमा	कर्क
मंगल	मेष, वृश्चिक
बुध	मिथुन, कन्या
बृहस्पति	धनु, मीन
शुक्र	वृष, तुला
शनि	मकर, कुम्भ

नक्षत्र—पहले हम भचक्र से परिचय कर चुके हैं। इसी भचक्र में 27 नक्षत्रों की स्थिति होती है। मेष राशि के आरम्भ में अश्विनी तथा अन्तिम मीन राशि के अन्त में अन्तिम नक्षत्र रेवती स्थित है। प्रत्येक नक्षत्र का विस्तार 13 अंश व 20 कला होता है। इसके चार समान भाग होते हैं। इन्हें चरण या पाद भी कहते हैं। नौ चरणों अर्थात् सवा दो ($2\frac{1}{4}$) नक्षत्रों से एक राशि बनती है। इन नक्षत्रों के प्रत्येक चरण के प्रतिनिधि रूप में हिन्दी वर्णमाला के मात्रा सहित चार-चार अक्षर माने जाते हैं। जन्म के समय जिस नक्षत्र का जो चरण वर्तमान होता है, उस चरण के अक्षर से शुरू होने वाला नाम शिशु का जन्म नाम माना जाता है। नीचे नक्षत्रों के नाम व उनके चरणाक्षर दिए जा रहे हैं—

नक्षत्र नाम	अक्षर
1. अश्विनी	चू, चे चो, ला
2. भरणी	ली, लू, ले, लो
3. कृत्तिका	आ, ई उ, ए
4. रोहिणी	ओ, वा, वी, वू
5. मृगशिरा	वे, वो, का, की
6. आर्द्रा	कु, घ, ड, छ
7. पुनर्वसु	के, को, हा, ही
8. पुष्य	हू, हे, हो, डा
9. श्लेषा	डी, डू, डे, डो
10. मघा	मा, मी, मू, मे
11. पूर्वाफाल्गुनी	मो, टा, टी, टू
12. उत्तराफाल्गुनी	टे, टो, पा, पी
13. हस्त	पू, ष, ण, ढ़
14. चित्रा	पे, पो, रा, री
15. स्वाति	रू, रे, रो, ता
16. विशाखा	ती, तू, ते, तो
17. अनुराधा	ना, नी नू, ने
18. ज्येष्ठा	नो, या; यी, यू
19. मूल	ये, यो, भा, भी
20. पूर्वाषाढ़	भू, धा, फा, ढ़ा
21. उत्तराषाढ़	भे, भो, जा, जी
22. श्रवण	खी, खू, खे, खो
23. धनिष्ठा	गा, गी, गू, गे
24. शतभिषा	गो, सा, सी, सू
25. पूर्वाभाद्रपद	से, सो, दा, दी
26. उत्तराभाद्रपद	दू, थ, झ, ञ
27. रेवती	दे, दो, चा, ची

इस तरह हमने संक्षेप में भचक्र व सौरमंडल के ग्रहों का संक्षिप्त व आवश्यक ज्ञान प्राप्त किया। इसके अतिरिक्त सौर-मंडल के ग्रहों के संक्रमण (चलने) से ही बनने वाले ऋतु, अयन, मास, पक्ष, तिथि आदि की भी जानकारी प्राप्त कर लेनी चाहिए।

ऋतु—भारतीय आचार्यों ने छह ऋतुएं मानी हैं। इनका सीधा सम्बन्ध सूर्य के भचक्र-भ्रमण से है। सूर्य जब विशेष राशियों में पहुँचता है तो एक निश्चित ऋतु मानी जाती है। ऋतुएं सूर्य की राशि के अनुसार इस प्रकार हैं—वसन्त (सूर्य की राशि मीन, मेष) ग्रीष्म (वृष, मिथुन) वर्षा (कर्क, सिंह) शरद् (कन्या, तुला) हेमन्त (वृश्चिक, धनु) शिशिर (मकर, कुम्भ)।

आशय यह है कि लगभग दो सौरमासों के बराबर एक ऋतु मानकर बारह सौरमासों में छह ऋतुओं का विभाजन किया गया है।

अयन—एक सम्पूर्ण सौर वर्ष का मान 365 दिन, 15 घड़ी, 31 पल व 31 विपल माना गया है। आधुनिक वेध-सिद्ध अनुसन्धानों के आधार पर वैज्ञानिकों ने सौर वर्ष 365 दिन, 15 घड़ी, 22 पल व 56 विपल माना है। आजकल इसे ही प्रामाणिक माना जाता है। इतने समय में सूर्य भचक्र की एक परिक्रमा पूरी कर लेता है। इसके दो भाग क्रमशः उत्तरायण व दक्षिणायन माने गए हैं। सूर्य की कर्क राशि के प्रारम्भ से धनु राशि के अन्त तक संक्रमण करने के काल को दक्षिणायन तथा मकर संक्रान्ति से मिथुन संक्रान्ति तक के काल को उत्तरायण कहते हैं। एक अयन लगभग ६ मास के बराबर होता है।

मास—भारतीय ज्योतिष में मास-वर्गीकरण का आधार मुख्य रूप से सूर्य व चन्द्रमा को माना गया है। इन्हीं के संक्रमण

के आधार पर सौरमास व चान्द्रमास कहे गए हैं।

सूर्य के मेषादि बारह राशियों में संक्रमण पूरा करने के संदर्भ में जिस सौरमास का उल्लेख पीछे किया गया है, वह वास्तव में सूर्य के किसी राशि में संक्रमण के काल के बराबर समय है। जितने समय में सूर्य किसी एक राशि में रहे, वह एक सौरमास होता है। सूर्य लगभग एक अंश प्रतिदिन खचक्र में चलता है। अतः तीस अंशों की एक राशि को पूरा करने में जितना समय लगता है, वह **सौरमास** कहलाता है। ऐसे बारह सौरमास मिलकर एक सौरवर्ष होते हैं। इन मासों का नामकरण राशि के नाम पर ही किया गया है। उदाहरण के लिए मेषमास, वृष-मास आदि या मेष संक्रान्ति वृष संक्रान्ति मास आदि।

चान्द्रमास पूरे तीस दिन का नहीं होता। यह 27 दिन से 29 दिन तक होता है। चन्द्रमा इतने दिनों में सभी राशियों अर्थात् सारे खचक्र की परिक्रमा कर लेता है। सौरमास की अपेक्षा यही मूलभूत भेद हैं, क्योंकि सौरमास सूर्य के एक राशि के संक्रमण काल को कहते हैं, जबकि चान्द्रमास चन्द्रमा के सभी राशियों के संक्रमण के काल को कहते हैं। प्रायः चान्द्रमास का प्रारम्भ चन्द्रमा के अमावस्या के बाद प्रथम उदय के दिन से लेकर पुनः सूर्य की किरणों में लोप तक अर्थात् अगली अमावस्या तक माना जाता है। चान्द्रमास की पन्द्रह तारीख को पूर्ण चंद्रमा होता है। यहां एक बात विशेष रूप से ध्यान देने योग्य है कि इन मासों का नामकरण मास की पूर्णिमा के नक्षत्र के आधार पर किया गया है। प्रायः प्रत्येक मास की पूर्णिमा को ये नक्षत्र होते हैं—

चैत्र की पूर्णिमा को (चित्रा) नक्षत्र होता है। वैशाख (विशाखा), ज्येष्ठ पूर्णिमा (ज्येष्ठा), आषाढ़ (पू. षा.), श्रावण (श्रवण), भाद्रपद (पूर्वा भाद्रपद), आश्विन (अश्विनी), कार्त्तिक

(कृत्तिका), मार्गशीर्ष (मृगशिरा), पौष (पुष्य), माघ (मघा), फाल्गुन (पूर्वा फाल्गुनी)।

इन्हीं नक्षत्रों के नाम पर मासों के नाम हैं—श्रवण नक्षत्र का मास (श्रावण) अश्विनी का मास (आश्विन) इत्यादि।

बारह चान्द्रमासों के अंग्रेजी मास इस तरह हैं—

चैत्र (मार्च-अप्रैल), वैशाख (अप्रैल-मई), ज्येष्ठ (मई-जून), आषाढ़ (जून-जुलाई), श्रावण (जुलाई-अगस्त), भाद्रपद या भादों (अगस्त-सितम्बर), आश्विन (सितम्बर-अक्टूबर), कार्तिक (अक्टूबर-नवम्बर), मार्गशीर्ष या अगहन (नवम्बर-दिसम्बर), पौष (दिसम्बर-जनवरी), माघ (जनवरी-फरवरी), फाल्गुन (फरवरी-मार्च)।

ये चान्द्रमास ही प्रायः भारतीय पचांगों में लिखे जाते हैं। हिन्दी कैलेण्डर की तिथियां भी चान्द्रमास के आधार पर ही दी जाती हैं। उत्तर व दक्षिण भारत में केवल इतना भेद है कि उत्तर भारत के पंचांगों में पहले कृष्ण व बाद में शुक्लपक्ष लिखा जाता है। जबकि अन्यत्र वास्तविक चान्द्रमास के आरम्भ व अन्त के आधार पर पहले शुक्लपक्ष व बाद में कृष्णपक्ष लिखा जाता है।

पक्ष—नए चन्द्रमा से पूर्णिमा तक शुक्लपक्ष माना गया है। इसका कारण यह है कि इस अवधि में चन्द्रमा बढ़ते-बढ़ते पूर्ण कलायुक्त हो जाता है। रात में चांदनी के विस्तार की सफेदी के कारण इसे शुक्ल (सफेद) पक्ष कहते हैं।

पूर्णिमा से आगे अमावस्या तक जब चन्द्रमा घटते-घटते अन्त में लुप्त हो जाता है, तब 'कृष्ण (काला) पक्ष' होता है।

दोनों पक्षों में तिथियों का नामकरण चन्द्रमा की स्थिति व उनकी संख्यात्मकता को दृष्टि में रखकर ही किया गया है। अमावस्या से आगे पूर्णिमा तक क्रमशः प्रतिपदा, द्वितीया, तृतीया

आदि तिथियां क्रमशः पहली, दूसरी, तीसरी आदि संख्या-वाचकता के आधार पर ही कही जाती हैं। यही स्थिति पूर्णिमा से अमावस्या तक होती है, अर्थात् पूर्णिमा के बाद फिर प्रतिपदा, द्वितीया आदि तिथियों की आवृत्ति होती है।

तिथि—तिथियां तीस होती हैं। इनका विस्तार, अर्थात् एक तिथि कितने घड़ी, पल या घंटा मिनट तक रहती है, इसका निर्णय सूर्य व चन्द्रमा की भचक्र में स्थिति पर निर्भर करता है। अमावस्या को सूर्य व चन्द्रमा एक ही राशि पर रहते हैं। सूर्य धीमे चलता है तथा चन्द्रमा शीघ्र चलता है, अतः चन्द्रमा ज्यों-ज्यों सूर्य से आगे बढ़ता जाता है त्यों-त्यों प्रत्येक 12 अंश के अन्तर पर क्रमशः प्रतिपदा आदि तिथियां होती चलती हैं। पूर्णिमा को इस गति से चन्द्रमा सूर्य की राशि से सातवीं राशि में पहुंच जाता है। आगे अमावस्या को चन्द्रमा पुनः सूर्य के साथ आ मिलता है। ये तिथियां इस प्रकार हैं—

शुक्ल पक्ष	प्रतीक अंक	कृष्ण पक्ष
प्रतिपदा	1	प्रतिपदा
द्वितीया	2	द्वितीया
तृतीया	3	तृतीया
चतुर्थी	4	चतुर्थी
पंचमी	5	पंचमी
षष्ठी	6	षष्ठी
सप्तमी	7	सप्तमी
अष्टमी	8	अष्टमी
नवमी	9	नवमी
दशमी	10	दशमी
एकादशी	11	एकादशी
द्वादशी	12	द्वादशी

त्रयोदशी	13	त्रयोदशी
चतुर्दशी	14	चतुर्दशी
पूर्णिमा (15)		(30) अमावस्या

चन्द्रमा की भ्रमण गति में अन्तर रहने के कारण यह दूरी वह 27 से 29 दिनों में पूरी कर लेता है। यही कारण है कि चान्द्रमासों में तिथियों का घटना या बढ़ना देखा जाता है। सूर्य से चन्द्रमा का अन्तर चन्द्रमा की तीव्र गति के कारण जब 24 घंटे में 12 अंश से अधिक हो जाता है तो तिथि का लोप मानते हैं। उदाहरण से इसे समझने का प्रयास करते हैं। चैत्र मास की अमावस्या को सूर्य व चन्द्रमा मीन राशि में सामान्यतः होते हैं। सूर्य के अंशों से 12 अंश आगे जाने पर स्थूल रूप से प्रतिपदा हो जाती है, 24 अंशों पर द्वितीया। इसी क्रम में यदि चन्द्रमा तेज चलकर द्वितीया से तृतीया तक 36 अंशों से अधिक व 48 अंशों से कम पार कर लेगा तो चतुर्थी वा तृतीया को एक मान लिया जाएगा, अर्थात् तृतीया का क्षय होगा। यह गणना विल्कुल स्थूल है, केवल समझने की दृष्टि से यहां इसका उल्लेख किया गया है।

वार—वार सात होते हैं। राहु व केतु को छोड़कर शेष सातों ग्रहों के नाम पर एक-एक वार होता है। पीछे बता चुके हैं कि राहु व केतु छाया ग्रह होने के कारण आकाश में अपना भौतिक पिण्ड नहीं रखते हैं, अतः इन्हें वारों की व्यवस्था में सम्मिलित नहीं किया गया है। वारों के नाम इस प्रकार है—

सूर्यवार (रविवार)	Sunday
सोमवार	Monday
मंगलवार	Tuesday
बुधवार	Wednesday
बृहस्पतिवार	Thursday

शुक्रवार	Friday
शनिवार	Saturday

वारों का यह क्रम अनुमान पर आधारित नहीं है, अपितु इसके पीछे वैज्ञानिकता है। आइए, समझने का प्रयास करें। संस्कृत में 'होरा' शब्द घण्टे का समानार्थक माना जाता है। आशय यह है कि 24 होराओं का एक 'अहोरात्र' यानि दिन-रात होता है। इन चौबीसों घण्टों का अधिपति प्रतिदिन इन सातों ग्रहों को माना गया है। सृष्टि के प्रारम्भ में सर्वप्रथम सूर्य का प्रत्यक्ष दर्शन होने के कारण पहला वार सूर्य का अर्थात् रविवार है। इस रविवार के चौबीस घंटों में सातों ग्रहों का आधिपत्य इस प्रकार रहेगा। सूर्योदय से बाद के पहले घंटे या होरा का स्वामी सूर्य होगा। आकाश में सातों ग्रहों की कक्ष्याओं का जो क्रम है, वही क्रम वारों में होरा गणना के संदर्भ में प्रायः माना जाएगा। अर्थात् सूर्य का निकटवर्ती शुक्र रविवार की दूसरी होरा का स्वामी होगा। तीसरी होरा फिर निकटवर्ती बुध की, चौथी चन्द्रमा की, पांचवी शनि की, छठी गुरू की, सातवीं मंगल की, पुनः आटवीं सूर्य की, नवीं शुक्र की होगी। यही क्रम चलते-चलते रविवार के चौबीसवें घंटे में बुध की होरा होगी तथा अगले दिन सूर्योदय के समय चन्द्र की होरा आने पर अगले वार का नामकरण चन्द्रवार या सोमवार होगा। आशय यह है कि सूर्योदय के समय जिस ग्रह की होरा होगी, उसी के नाम का वह वार होता है। प्रत्येक होरा के ग्रह से छठा ग्रह अगली होरा का स्वामी होता है। इस क्रम से चलने पर तीसरे दिन पहली होरा मंगल की, चौथे दिन बुध की, पांचवे दिन गुरू की, छठे दिन शुक्र की तथा सातवें दिन शनि की पहली होरा (घंटा) होगी। अतः वारों को उपर्युक्त विशेष क्रम दिया गया है।

पंचांग परिचय—तिथि, वार, नक्षत्र, योग व करण ये पांचों

पचांग कहे जाते हैं। इनका तात्कालिक विवरण देने वाली पुस्तक को 'पंचांग' कहते हैं। पंचांग को संक्षेप में 'तिथिपत्र' या 'पत्रा' भी कहते हैं।

पंचांग के तीन तत्त्वों (तिथि, वार, नक्षत्र) का विचार हम अभी तक कर चुके हैं। शेष बचे दो (योग व करण) भी सूर्य व चन्द्र की स्थिति से ही जाने जाते हैं। योगों की संख्या 27 है तथा करण संख्या 11 है। फलादेश या आधुनिक जन्मपत्री की रचना में इन दो को विशेष महत्त्व नहीं दिया गया है। इसलिए इनका नामोल्लेख मात्र कर देते हैं। इनकी प्रतिदिन की स्थिति किसी भी अच्छे प्रामाणिक पंचांग में जानी जा सकती है।

27 योग ये हैं-

विष्कुम्भ, प्रीति, आयुष्मान्, सौभाग्य, शोभन, अतिगण्ड, सुकर्मा, धृति, शूल, गण्ड, वृद्धि, ध्रुव, व्याघात, हर्षण, वज्र, सिद्धि, व्यतिपात, वरीयान्, परिघ, शिव, सिद्ध, साध्य, शुभ, शुक्ल, ब्रह्म, ऐन्द्र, वैधृति।

11 करण ये हैं—

बव, बालव, कौलव, तैतिल, गर, वणिज, विष्टि, शकुनि, चतुष्पद, नाग, किंस्तुघ्न।

इस प्रकार हमने संक्षेप में आकाश-चक्र व उसमें स्थित राशियों व ग्रहों की खगोलीय स्थिति की जानकारी प्राप्त कर ली है। इस आधारभूत जानकारी को ज्योतिष के जिज्ञासु अपने मस्तिष्क में पक्के तौर पर स्थिर कर लें, क्योंकि इसके द्वारा पंचांग से आवश्यक जानकारी प्राप्त करने व उसका उपयोग करने में सुविधा होगी। इसके अतिरिक्त ग्रहों व राशियों के शील व प्रकृति के विषय में भी थोड़ी जानकारी प्राप्त करना आवश्यक है।

राशियों की प्रकृति व शील

बारह राशियों का विभाग अलग-अलग आधार पर किया जाता है। सबसे पहला विभाग चर, स्थिर व द्विस्वभाव है—

चर	स्थिर	द्विस्वभाव
मेष	वृष	मिथुन
कर्क	सिंह	कन्या
तुला	वृश्चिक	धनु
मकर	कुम्भ	मीन

इस विभाग के अतिरिक्त पंचमहाभूतों (पृथ्वी, जल, वायु, तेज व आकाश) के आधार पर भी राशियों को वर्गीकृत किया गया है—लेकिन वायु तत्त्व को राशि विभाग में नहीं लिया गया है।

अग्नि तत्त्व—	मेष	सिंह	धनु
पृथ्वी तत्त्व—	वृष	कन्या	मकर
आकाश तत्त्व—	मिथुन	तुला	कुम्भ
जल तत्त्व—	कर्क	वृश्चिक	मीन

उपर्युक्त बारह राशियों में सम व विषम राशियां भी हैं। मेष, मिथुन, सिंह, तुला, धनु, कुम्भ ये विषम, पुरुष व क्रूर राशियां हैं तथा शेष सम, स्त्री व सौम्य राशियां हैं।

राशियों के शील व प्रकृति के विषय में यह जानकारी आगे कुण्डली निर्माण के लिए तो आधारभूत रहेगी ही, साथ ही कुण्डली से फल कहने में इसका साक्षात् प्रत्यक्ष प्रयोग जिज्ञासु देखेंगे व स्वयं अनुभव करेंगे। वास्तव में ये बारह राशियां हमारे शरीर के कुछ विशेष अंगों का भी प्रतिनिधित्व करती हैं। राशि के बल, स्वभाव, कुण्डली में स्थिति आदि के आधार पर जातक के फिर उसी अंग को बल मिलता है या तदनुसार हानि होती है। राशियों के इस अंग-विभाग को **कालपुरुष चक्र** कहते हैं।

कालपुरुष चक्र के अनुसार शरीर के अंगों की प्रतिनिधि राशियां इस प्रकार हैं—

मेष (सिर), वृष (मुख), मिथुन (स्तन या छाती), कर्क (हृदय), सिंह (पेट), कन्या (कमर), तुला (वस्ति/पेडू), वृश्चिक (लिंग), धनु (जांघ), मकर (दोनों घुटने), कुम्भ (पिंडलियां), मीन (पैर)।

राशियों के इस विश्लेषण को भली-भांति अपने मस्तिष्क में जिज्ञासुओं को जमा लेना चाहिए, क्योंकि यह ज्ञान कुण्डली की गवेषणा करने में विशेष सहायक होगा।

ग्रहों की प्रकृति, शील व प्रतिनिधित्व

राशियों की तरह नौ ग्रहों की भी अपनी पृथक् वृत्ति, प्रकृति स्वभावादि होते हैं। इनका उपयोग भी कुण्डली-निर्माण की अपेक्षा कुण्डली विश्लेषण में अधिक है। इस पुस्तक से कुण्डली निर्माण का पूरा अभ्यास करने के बाद जिज्ञासुओं को फलादेश की सरल व प्रारम्भिक पुस्तकों से अभ्यास करना चाहिए।

ग्रहों का शीलादि इस प्रकार है—

सूर्य—पुरुष, क्षत्रिय जाति, पाप ग्रह, सत्त्वगुण प्रधान, अग्नि-तत्त्व, पित्त प्रकृति है तथा विशेष रूप से पित्त, हड्डी, पिता, सिर, नेत्र, दिमाग व हृदय पर अपना प्रभाव रखता है।

चन्द्र—स्त्री, क्षत्रिय जाति, सौम्य ग्रह, सत्त्वगुण, जल तत्त्व वात कफ प्रकृति है। छाती, थूक, जल, फेफड़े तथा नेत्र-ज्योति पर अपना प्रभाव रखता है।

मंगल—पुरुष, क्षत्रिय, पाप, तमोगुणी, अग्नितत्त्व पित्त प्रकृति है। पित्त, रक्त, मासपेशियां, आपरेशन, कान, नाक आदि का प्रतिनिधि है।

बुध—नपुंसक, वैश्य जाति, समग्रह, रजोगुणी, पृथ्वी तत्त्व

व त्रिदोष (वात, पित्त, कफ) प्रकृति है। वायुरोग, जीभ, तालु, स्वर, गुप्तरोग, गूगापन, आलस्य व कोढ़ का प्रतिनिधि है।

बृहस्पति—पुरुष, ब्राह्मण, सौम्य, सत्वगुणी, आकाश तत्त्व व कफ प्रकृति है। चर्बी, कफ, सूजन, घर, विद्या, पुत्र, पौत्र, विवाह व गुर्दे का प्रतिनिधित्व करता है।

शुक्र—स्त्री, ब्राह्मण, सौम्य, रजोगुणी, जल तत्त्व व कफ प्रकृति है। वीर्य, काम-शक्ति, वैवाहिक सुख, काव्य, गान शक्ति, आख व स्त्री का प्रतिनिधि है।

शनि—नपुंसक, शूद्रवर्ण, पाप, तमोगुणी, वात कफ प्रकृति, व वायुतत्त्व प्रधान है। आयु, शारीरिक बल, योगाभ्यास, ऐश्वर्य, वैराग्य, नौकरी, हृदय रोग आदि का प्रतिनिधि है।

राहु व केतु—पाप ग्रह, चांडाल, तमोगुणी, वात पित्त प्रकृति, व नपुंसक हैं। चर्म रोग, पैर, भूख व उन्नति में बाधा के प्रतिनिधि हैं।

जन्मकुण्डली में जो ग्रह कमजोर हो उसके स्वभावानुसार ही रोग या सम्बन्धित व्यक्तियों की हानि की सम्भावना रहती है। ग्रहों के बल व अबल का संक्षिप्त विचार हम आगे करेंगे।

पूर्वोक्त विषयों के अतिरिक्त ग्रहों की दृष्टि, नीचोच्च राशियां तथा शत्रु-मित्र ग्रह भी जान लेने चाहिए। इनसे ही ग्रह की सबलता व निर्बलता का मूल रूप से विचार किया जा सकेगा।

ग्रहों की दृष्टि—सभी ग्रह अपने स्थान से (जहां कुण्डली में हों) तीसरे व दसवें स्थान को एक पाद (चौथाई) दृष्टि से, नवें व पांचवें स्थान को द्विपाद (आधी) दृष्टि से, चौथे व आठवें स्थान को त्रिपाद (पौनी) तथा सातवें स्थान को पूर्ण (पूरी) दृष्टि से देखते हैं।

इसके अतिरिक्त मंगल चौथे आठवें, गरू पांचवें नवें, शनि

तीसरे दसवें, राहु-केतु पांचवें नवें स्थान को भी पूर्ण दृष्टि से देखते हैं।

ग्रहों की उच्च व नीच राशियां—सूर्य (मेष), चन्द्रमा (वृष), मंगल (मकर), बुध (कन्या), गुरू (कर्क), शुक्र (मीन), शनि (तुला), राहु (मिथुन), व केतु (धनु) में उच्च होता है। सभी ग्रह अपने उच्च से सातवीं राशि में नीच होते हैं। जैसे सूर्य तुला में, चन्द्र वृश्चिक में नीच होगा। ग्रहों की उच्च, नीच व अपनी राशियों के अतिरिक्त **मूल त्रिकोण राशियां** भी होती हैं। इन राशियों में ग्रह, अपनी राशि से अधिक व उच्च राशि से कम वली होता है। ग्रहों का **मूल त्रिकोण** इस प्रकार है—

सूर्य सिंह राशि में 20 अंशों तक मूल त्रिकोणी तथा वाद में स्वगृही होता है। चन्द्रमा वृष राशि के 3 अंश तक उच्च तथा तदुपरान्त इस राशि में मूल त्रिकोण है। मंगल मेष के 18 अंशों तक मूल त्रिकोण तथा इसके वाद में स्वगृही है। बुध कन्या के 15 अंश तक उच्च, 16 से 20 अंश तक मूल त्रिकोण तथा वाद में स्वगृही होता है। गुरू धनु राशि के 13 अंशों तक मूल त्रिकोण तथा वाद में 30 अंशों तक स्वगृही है। शुक्र तुला के 10 अंश तक मूल त्रिकोण तथा शेष अंशों में स्वगृही होता है। शनि कुम्भ के 20 अंशों तक मूल त्रिकोण तथा शेष अंशों में स्वगृही होता है। राहु का कर्क में तथा केतु का मकर में मूल त्रिकोण एवं कन्या व मीन में स्वगृह माना जाता है।

शुभ व अशुभ ग्रह—सभी ग्रहों में कुछ ग्रह शुभ या सौम्य हैं, कुछ अशुभ या क्रूर हैं। पूर्ण चन्द्र, बृहस्पति, शुक्र ये स्वाभाविक शुभ ग्रह हैं। सूर्य, मंगल, शनि, राहु व केतु पाप ग्रह हैं। कृष्ण पक्ष की दशमी से शुक्ल पक्ष की पंचमी तक चन्द्रमा क्षीण होता है। क्षीण चन्द्रमा भी पाप ग्रह माना जाता है। बुध की यह विशेषता है कि वह जिस ग्रह के साथ होता है वैसा ही हो

जाता है। अर्थात् पापग्रहों के साथ होगा तो पाप तथा शुभग्रहों के साथ होने पर शुभ होता है।

ग्रहों की मित्रता—अपनी राशि, उच्च या मूल त्रिकोण राशि में तो ग्रह बली होते हैं, किन्तु अपने मित्र की राशि में होने पर भी योगकारक (फलदायक) होते हैं। ग्रहों की मित्रता तीन तरह से होती है—निसर्ग (स्वाभाविक) मैत्री, तात्कालिक मैत्री तथा पंचधा मैत्री।

ग्रहों में परस्पर स्वाभाविक रूप से मैत्री या शत्रुता मानी गयी है, इसे निसर्ग मैत्री कहते हैं। यह परिवर्तित नहीं होती। सभी व्यक्तियों की कुण्डली में एक तरह से ही मानी जाती है। तात्कालिक मैत्री व्यक्ति की लग्न कुण्डली में ग्रहों की स्थिति से

ग्रहों की निसर्ग मैत्री इस प्रकार है—

ग्रह	मित्र	शत्रु	सम
सूर्य	चन्द्र, मंगल गुरू	शुक्र, शनि	बुध
चन्द्र	सूर्य, बुध	—	शुक्र, मंगल, गुरू, शनि
मंगल	रवि, चन्द्र, गुरू	बुध	शुक्र, शनि
बुध	सूर्य, शुक्र	चन्द्र	मंगल, गुरू, शनि
गुरू	सूर्य, चन्द्र, मंगल	बुद्ध, शुक्र	शनि
शुक्र	बुध, शनि	सूर्य, चन्द्र	मंगल, गुरू
शनि	बुध, शुक्र	सूर्य, चन्द्र, मंगल,	गुरू

जानी जाती है। सभी ग्रह जिस स्थान में स्थित हों, वहां से (2-3-4-10-11-12). स्थानों में स्थित ग्रहों के साथ मित्रता रखते हैं तथा शेष स्थानों में शत्रु होते हैं। इन दोनों की समन्वित स्थिति से पंचधा मैत्री जानी जाती है।

पंचधा मैत्री जानने के लिए हमें तात्कालिक व स्वाभाविक मैत्री की तुलना करनी चाहिए। पंचधा मैत्री कहने का तात्पर्य है कि ग्रहों के अतिमित्र, मित्र, अतिशत्रु, शत्रु व सम ये पांच प्रकार होते हैं। दोनों तरह से मित्र या शत्रु क्रमशः अतिमित्र या अतिशत्रु हो जाता है। एक स्थान पर मित्र या शत्रु तथा दूसरे प्रकार (निसर्ग) से सम हो तो क्रमशः मित्र व शत्रु ही रहेंगे। जो ग्रह एक जगह मित्र व अन्यत्र शत्रु हों तो वे सम हो जाते हैं।

इस सारी जानकारी का इस्तेमाल कुण्डली में ग्रहों के शुभाशुभ फल जानने तथा दशा व अन्तर्दशा के समय की शुभाशुभता को पहचानने में होता है।। इसकी जानकारी बाद के पाठों में दी जाएगी। इन सबसे पहले हमें कुण्डली निर्माण की जानकारी आवश्यक है, अतः अगले पाठ में हम इसी विषय को समझेंगे।

(२)

जन्म-कुण्डली निर्माण

जन्म-कुण्डली निर्माण की दिशा में आगे बढ़ने से पहले हमें तीन चीजों का सही ज्ञान आवश्यक है। इनके बिना अथवा इनकी सही जानकारी न होने पर कुण्डली बनाना असम्भव तो होगा ही साथ ही उससे प्राप्त परिणाम भी विश्वसनीयता खो देंगे।

(i) **जन्म-तिथि** -- भारतीय पद्धति के अनुसार जिस तिथि में सूर्य उदय होता है, वही तिथि अगले सूर्योदय तक मानी जाएगी। आशय यह है कि प्राचीन पद्धति में तिथि के विस्तार व वर्तमानता का आधार सूर्योदय है। सूर्योदय से अगले सूर्योदय तक गणित कार्य के संदर्भ में एक ही तिथि रहेगी। इसके विपरीत आधुनिक पद्धति में तिथि की व्याप्यता या विस्तार रात्रि के 12 बजे से अगली रात्रि 12 बजे (मध्यरात्रि) तक मानी जाती है। तिथि परिवर्तन का आधार मध्यरात्रि है। इसी के आधार पर वारों का निर्णय किया जाता है। सूर्योदय के समय का वार ही जन्म वार माना जाएगा, चाहे हम किसी भी पद्धति से जन्मतिथि स्वीकार कर रहे हों। यदि किसी का जन्म 4 अप्रैल 1984 बुधवार की रात्रि 2-15 A. M. (आधी रात के बाद) हुआ है तो जन्म का वार बुधवार ही माना जाएगा तथा जन्मतिथि चैत्र शुक्ल तृतीया ही रहेगी। किन्तु अंग्रेजी कैलेण्डर के अनुसार जन्मतिथि 5 अप्रैल ही मानी जाएगी,

क्योंकि जन्म मध्यरात्रि के वाद हुआ है। इस भेद से छुटकारा पाने के लिए हम भारतीय पद्धति से ही जन्म-पत्र लिखते हैं तथा वहां पर वार एवं तिथि तदनुसार लिखकर यह उल्लेख करना आवश्यक समझेंगे कि वालक का जन्म 4-5 अप्रैल की मध्यरात्रि में हुआ था। ऐसा न करने पर, यदि हम लिखेंगे कि 5 अप्रैल 2-15 A. M. पर जन्म हुआ था तो परिस्थिति वशात् 5-6 अप्रैल की मध्यरात्रि को 2-15 बजे भी जन्म समझने का भ्रम हो सकता है।

इसलिए कुण्डली निर्माण के लिए सवसे पहले जन्मतिथि का निश्चय कर लेना चाहिए।

(ii) **जन्म समय**—जन्मतिथि का सही निश्चय हो जाने पर भी यदि जन्म का समय हमें ठीक-ठीक ज्ञात नहीं होगा तो सही कुण्डली नहीं वन सकेगी। इसलिए तिथि का निश्चय कर लेने के वाद हमें सही जन्म समय को तय कर लेना चाहिए। इस विषय में व्यावहारिक कठिनाई यह है कि हमें दूसरों द्वारा दी गई जानकारी पर ही निर्भर रहना पड़ता है। ग्रामीण इलाकों में, जहां प्रायः घरों में ही प्रसव होते हैं तो अन्दर प्रसूता के साथ रहने वाली स्त्रियां इस विषय पर ध्यान नहीं देतीं, अथवा घड़ी आदि न होने के कारण वे चाहते हुए भी सही समय का निर्धारण नहीं कर पातीं। नगर क्षेत्रों में, जहां आधुनिक सुविधाएं उपलव्ध भी हैं, लेकिन उनके प्रयोग में विशिष्ट व्यावहारिक कठिनाइयां होती हैं। अस्पतालों में प्रसव होने के कारण परिचारिकाओं व डॉक्टरों का ध्यान प्राथमिकता के आधार पर प्रसूता व शिशु की सुरक्षा पर अधिक रहता है। अतः वे फुरसत में, वाद में जन्म विवरण लिखते समय अनुमान से या स्मृति के आधार पर ही जन्म समय लिख देते हैं, जिसकी प्रामाणिकता संदिग्ध होती है।

यदि जैसे-तैसे इस कठिनाई को दूर भी कर लिया जाय तो एक विवाद शेष है कि जन्म समय क्या माना जाए ? बालक के शरीर का कोई अंग जब दिखे तो वही जन्मकाल है, दूसरा विकल्प है कि जब बच्चा पूर्ण रूप से बाहर आ जाए तो वही जन्मकाल है। तीसरा विकल्प है कि जब बच्चा आकर रोये या शब्द करे तो जन्मकाल मानना चाहिए। इसके अलावा कुछ विद्वानों का मत है कि जब नाल काटकर बच्चे को पूर्णतया मां के अंग से अलग कर दिया जाए तो उसे जन्म समय मानना चाहिए।

हमारा विचार है कि इन विकल्पों में से तीसरा विकल्प, अर्थात् बच्चे द्वारा आवाज किए जाने के समय को ही जन्म समय सामान्यतः मान लेना चाहिए। यदि किसी परिस्थितिवश बच्चा जन्मोपरान्त शब्द करने में विलम्ब करे तो नाल काटने के समय को स्वीकार कर लेना चाहिए। आशय यह है कि शब्द करने व नाल काटने में जो पहले हो, उसी समय को जन्म समय मान लेना चाहिए।

इसलिए जन्म समय जन्म कुण्डली निर्माण का बीज है, जिससे जन्मकुण्डली रूपी फलदार वृक्ष बनेगा। यदि बीज पूर्ण शुद्ध होगा तो फल भी शुद्ध होना स्वाभाविक है। अतः जिज्ञासुओं को इस विषय में बहुत सावधानी की आवश्यकता है। उपलब्ध समय से जन्मलग्न बनाकर उसे शुद्ध करने की प्रक्रियाएं आचार्यों ने बतायी हैं, जिनकी सहायता से हम यथाकथंचित् इष्ट जन्म समय की शुद्धि कर सकते हैं।

(iii) **जन्म स्थान**—उपर्युक्त दोनों बातों का सूक्ष्म निर्धारण कर लेने के बाद हमें जन्म स्थान का ज्ञान होना भी आवश्यक है। जन्मस्थान के अक्षांश (Latitude) और रेखांश (Longitude) के आधार पर ही जन्म लग्न निकाला जाएगा। अक्षांश व रेखांश का ज्ञान मान्यता प्राप्त एटलस से किया जा सकता

है। वैसे जन्म पत्र बनाने से सम्बन्धित पुस्तकों और एफेमेरीज या 'टेबल ऑफ एसेन्डेंट्स' में भी स्थानीय अक्षांश व रेखांश दिए होते हैं। यदि सही जन्म स्थान का सही अक्षांश ज्ञात न हो सके तो हमें उसके आस-पास के किसी बड़े शहर के अक्षांशों व रेखांशों को प्रयोग करना चाहिए।

उपर्युक्त तीनों तथ्यों को अलग से कागज पर नोट कर लें तथा अब जन्मकुण्डली निर्माण के लिए स्थिर मन से तैयार हो जाएं। इस कार्य के लिए सहायक सामग्री का होना भी परमावश्यक है।

(i) टेबल ऑफ असेन्डेंट्स्[+] (लग्न सारणी)—यह पुस्तक अंग्रेजी में बाजार में उपलब्ध है। 'लाहिड़ी' की टेबल्स् ज्योतिष के जिज्ञासु के पास सदा होनी चाहिए। इसे बार-बार नहीं बदलना पड़ता, अर्थात् यह सदा उसी रूप में काम आएगी।

(ii) एफेमेरीज[+]—वास्तव में यह पंचांग का आधुनिक संक्षिप्त रूप है। पंचांग में जहां तिथि, वार, नक्षत्र, योग, करण, ग्रह गति व स्पष्ट तथा लग्न आदि अनेक विषय दिए होते हैं तथा उसका उपयोग जन्म-कुण्डली निर्माण के अतिरिक्त भी पंडित लोग अनेक सम्बन्धित कार्यों में करते हैं, वहीं पर उक्त पुस्तक ग्रहों की वार्षिक स्पष्ट स्थिति तथा तिथि, नवांश एवं अन्य जन्म-कुण्डली निर्माणोपयोगी सामग्री से ही युक्त होने के कारण सीमित उपयोग वाली है।

किन्तु यह तथ्य है कि इसके आधार पर कम-से-कम गणित क्रिया से शुद्धतम जानकारी प्राप्त की जा सकती है, अतः आज-कल इसका प्रयोग अधिक हो रहा है। कारण यह है कि यह समय से बाजार में उपलब्ध हो जाती है तथा इसमें गणित

[+] उपरोक्त दोनों पुस्तकें : टेबल ऑफ असेन्डेंट्स् (लग्न सारणी) और एफेमेरीज मंगाने के लिए पत्र लिखें—रंजन पब्लिकेशन्स, 16 अंसारी रोड, नई दिल्ली-2

क्रिया इतनी कम व सरल है कि जनसाधारण भी इसका उपयोग कर सकता है। सबसे प्रमुख कारण यह है कि इसके निष्कर्ष अत्यन्त शुद्ध होते हैं, क्योंकि वे कम्प्यूटर की सहायता से बनाए जाते हैं। हम अपने जिज्ञासु पाठकों को इसी के उपयोग की सलाह देते हैं। एन० सी० लाहिड़ी की प्रतिवर्ष की एफे-मेरीज बाजार में उपलब्ध हो जाती है। पाठकों को इसे भी अपने पास सदा अधुनातन (Up-to-date) रखना चाहिए।

इस पुस्तक के उदाहरणों में हम आगे श्रीकृष्ण यूनिवर्सल एफेमेरीज का प्रयोग करेंगे। दोनों में से जो उपलब्ध हो उससे ही कार्य किया जा सकता है।

उपर्युक्त कथन से हमारा तात्पर्य यह नहीं है कि पंचांग की सहायता से जन्मकुण्डली बनाना अशुद्ध होता है, लेकिन हमारा अनुभव है कि उन्हें प्रायः समय से प्राप्त किया जाना कठिन है। फिर इसके अतिरिक्त मुख्य मुद्दा यह है कि उनके करण सिद्धान्तों (आधार सिद्धान्त) में आपस में मतभेद है तथा प्रारम्भिक जिज्ञासु उनके निष्कर्षों से नितान्त भ्रमित हो सकता है। तिथि आदि के निर्धारण में प्रायः इनमें बहुत मतभेद देखा जाता है तथा सभी अपने-अपने कार्य को प्रामाणिक बताते हैं। ब्रह्म सिद्धान्त, ग्रह लाघव, मकरन्द, केतकी आदि अनेक सिद्धान्त ग्रन्थों के आधार पर पंचांग बन रहे हैं, जिनमें भिन्न निष्कर्ष होना बड़ी साधारण बात है। फिर भी हम अगले पाठ में पंचांग द्वारा भी जन्मकुण्डली निर्माण की प्रक्रिया को थोड़ा समझाएंगे। जिस पाठक को जो पद्धति रुचिकर प्रतीत हो, उसे स्वेच्छा से स्वीकार कर ले। हमारे मत से प्रारम्भ में एफेमेरीज की सहा-यता से अभ्यास करना सरल व प्रामाणिक होगा।

अब आपके पास जन्मतिथि, जन्मसमय, जन्मस्थान, टेबुल्स ऑफ असेन्डेंट्स् और श्रीकृष्ण यूनिवर्सल एफेमेरीज तैयार हैं।

अब हमें कुण्डली के रचनात्मक पक्ष पर आना है। एफेमेरीज या टेबुल की सहायता से अब निम्नलिखित जानकारी हमें प्राप्त करनी होगी।

(i) अक्षांश - अभीष्ट स्थान विषुवत रेखा (Equator) से कितने अंश उत्तर या दक्षिण में है, यही दूरी उस स्थान का अक्षांश कहलाती है। जन्मस्थान के अक्षांश व रेखांश की सारिणी लाहिड़ी की टेबुल्स ऑफ असेन्डेंट्स् के पृष्ठ 100 से 107 तक दी गई है। जहां से अपने अभीष्ट भारत स्थित नगर का अक्षांश व रेखांश जान सकते हैं। जन्मस्थान का अक्षांश वहां से लेकर कागज पर अलग नोट कर लेना चाहिए।

(ii) रेखांश—ग्रीन्विच से हमारा स्थान कितने अंश पूर्व या पश्चिम में स्थित है, यह दूरी रेखांश कहलाती है। पूर्वोक्त टेबुल्स के पृष्ठ 100 से 107 तक ये दिए गए हैं। इन्हें भी अलग से नोट कर लेना चाहिए।

(iii) साम्पातिक काल (Sidereal time)—पृथ्वी अपनी धुरी पर जितने समय में एक परिक्रमा पूरी करती है, उस समय को 'साइडरियल टाइम' कहते हैं। यह समय दिन-रात के मान में अन्तर होने के कारण सदा सही चौबीस घंटे नहीं होता है। इसकी सही-सही जानकारी हमें उक्त टेबुल्स ऑफ असेन्डेंट्स से मिल सकती है। वहां पर इस प्रयोजन के लिए कई सारिणियां पृष्ठ 2 व पृष्ठ 4 पर दी गई हैं, जिनकी सहायता से हम सही जन्म कालिक स्थानीय साइडरियल टाइम (True Sidereal Time) जान सकते हैं। इसके लिए मामूली जोड़ घटा की जरूरत पड़ती है। इसे निकालने की विधि तो हम आगे बता रहे हैं, किन्तु पाठक यदि चाहें तथा समय कम हो तो एफेमेरीज में भी प्रतिदिन का साम्पातिक काल दिया रहता है, जो उस दिन का 12 बजे का मध्यम काल (Mean Sidereal Time) होता

है, उसे स्पष्ट करना भी बहुत सरल है। इससे थोड़े समय की बचत हो जाएगी। साम्पातिक काल निकालने से पहले हमें स्थानीय मध्यम समय (Local Mean Time) निकाल लेना चाहिए।

(iv) **स्थानीय मध्यम समय** (Local Mean Time) सारे देश के व्यवहारों में समानता लाने के लिए सब जगह किसी एक निश्चित स्थान के स्थानीय मध्यम समय को स्टैण्डर्ड टाइम मान लिया जाता है। भारतीय मानक समय (Indian Standard Time) 82°-30′ रेखांश (पूर्व) पर पड़ने वाले स्थान का स्थानीय समय है। स्थानीय रेखांश (जिस जगह की कुण्डली बनानी हो) का स्टैन्डर्ड रेखांश से जो अन्तर है, वह प्रति अंश 4 मिनट(1°=4 Minutes) के अनुसार घटाया या वढ़ाया जाता है। इससे प्राप्त समय स्थानीय समय होगा। इस गणित क्रिया से बचने के लिए हमारे पास 'लाहिड़ी' की लग्नसारिणी है। उसके पृष्ठ 100-107 तक जहां से हमने अक्षांश व रेखांश जाने थे, वहीं से भारतीय मानक समय व स्थानीय मध्यम समय के अन्तर को जाना जा सकता है। अर्थात् वहां पर दिए गए स्थानीय समय संस्कार (Local Time Correction) के नीचे के मिनटों को निर्देशानुसार भारतीय स्टैन्डर्ड समय में से घटाने या जोड़ देने से स्थानीय मध्यम काल आ जाएगा। इसे अलग से नोट कर लेना चाहिए। यदि जन्म 1942 ई० से 1945 ई० के बीच हुआ हो तो ध्यान रखिए कि स्टैन्डर्ड टाइम में से 1 घंटा घटाकर फिर देशान्तर संस्कार या स्थानीय समय संस्कार करके स्थानीय मध्यम समय निकालना चाहिए। इसका कारण यह है कि द्वितीय विश्वयुद्ध के कारण 1 सितम्बर 1942 से 14 अक्टूबर 1945 तक भारतीय स्टैन्डर्ड टाइम 1 घंटा वढ़ाया गया था। अब स्थानीय साम्पातिक काल को जानने के लिए एक उदाहरण देते हैं—

उदाहरण—2 दिसम्बर 1983 को दिल्ली में स्टैन्डर्ड टाइम रात्रि 2-15 पर शिशु का जन्म हुआ। इसकी कुण्डली बनाने के लिए हमने सर्वप्रथम अक्षांश, रेखांश व स्थानीय समय संस्कार लाहिड़ी की लग्न सारिणी के पृष्ठ 105 से लिए।

दिल्ली अक्षांश—28° 39′ North (उत्तर)

" रेखांश—77° 13′ East (पूर्व)

स्थानीय समय संस्कार (Local Time Correction) —21 मि० 8 से०

स्थानीय समय जानने के लिए (I.S.T.) 2-15 A.M. में से 21 मि० 8 से० घटाएं—

	घं०	मि०	से०
I.S.T.	2	15	00
Local Time Correction —	0	21	08
(Local Mean Time)	1	53	52

साम्पातिक काल (Sidereal Time) के लिए लग्नसारिणी का पृष्ठ 2 खोला। वहां से 2 दिसम्बर का (S. T.) साइडरियल टाइम लिया—

	घं०	मि०	से०
2 दिसम्बर का S. T.	16	42	45
(पृ० 4) 1983 का शोधन(Correction)—	00	00	25
	16	42	20
पृ० 102 दिल्ली का (S. T. Correction) +	00	00	03
दोपहर 12 बजे का साइडरियल टाइम	16	42	23

अब उपर्युक्त साइडरियल टाइम को अपने अभीष्ट जन्म समय का बनाने के लिए हमने देखा कि जन्मसमय इससे पहले

(दोपहर पूर्व) है या बाद में। पहले (A.M.) होने के कारण स्थानीय मध्यम समय को 12 घंटों में से घटाया। शेष समय के अनुसार हम पृष्ठ पांच पर दी गई तालिका के अनुसार शोधन करेंगे।

	घं०	मि०	से०
	12	00	00
L. M. T —	1	53	52
(Time Interval)	10	6	8

	घं०	मि०	से०
(पृष्ठ 5) 10 घंटे के लिए शोधन +	00	1	39
६ मिनट " " +	00	00	01
(8 से० नगण्य हैं)	00	1	40
(Time Interval) +	10	6	08
घंटा	10	7	48

इस समय को पूर्व प्राप्त साइडरियल टाइम में से घटा देने पर जन्मसमय का साइडरियल टाइम होगा—

	घं०	मि०	से०	
दोपहर 12 बजे S. T.	16	42	23	
—	10	7	48	
	6	34	35	जन्म समय का (S.T.)

लग्न निकालना—लग्न के लिए हमने लग्नसारिणी का पृष्ठ 48 खोलकर साइडरियल टाइम के अनुसार लग्न जाना—

S. T.	6 घं०	34 मि०	35 से०
	रा०	अं०	कला
6 घंटे 32 मिनट पर लग्न है—	5	14	03

शेष 2 मिनट व 35 से० के लिए उससे अगले खाने में से पिछले खाने का लग्न घटाकर देखा—

6 घंटे 36 मिनट पर	5	14	55
6 " 32 " "	5	14	3
	00	00	52

अर्थात् 4 मिनट में 52 कला लग्न आगे गया। 4 मिनट (240 से०) में 52 कला तो 2 मि० 35 से० (155 से०) में लग्न कितना आगे जाएगा ? क्रम इस तरह रहेगा—

4 मिनट—52 से०
2 मिनट—26 से०
1 मिनट—13 से०

6 घंटे 32 मिनट का लग्न—	5	14°	3′	
2 मिनट का संस्कार—	00	00	26′	
35 से० " " —	00	00	8′	(आनुमानिक)
	5	14	37′	लग्न

उपर्युक्त लग्न में अभीष्ट सन् का अयनांश संस्कार किया (पृ० 6)।

लग्न—	5	14°	37′	
1983 अयनांश संस्कार—	0	00°	38′	घटाया
	5	13	59′	

लग्न स्पष्ट हुआ (कन्या लग्न)

उदाहरण 2 : 5 अप्रैल, 1983 मंगलवार प्रातः 7-15 A.M. भारतीय मानक समय पर दिल्ली में उत्पन्न शिशु का जन्म लग्न निकालना है।

(i) **स्थानीय मध्यम समय (L.M.T.)**—भारतीय स्टैन्डर्ड समय 7-15 A.M. में से दिल्ली का समय शोधन 21.8 मिनट घटाया तो स्थानीय मध्यम समय ज्ञात हुआ—

घं०	मि०		
7	15		
—	21.8		समय शोधन
6	53	52	स्थानीय मध्यम समय

(ii) साम्पातिक काल (Sidereal time)—

	घं०	मि०	से०
5 अप्रैल का सा० टाइम	00	52	25
1983 का " " —	00	00	25
	00	52	00
(पृ० 102) सा० टाइम शोधन दिल्ली +	00	00	03
दोपहर 12 बजे का सा० टाइम	00	52	03

हमारा स्थानीय समय 6-53-52 A.M. दोपहर बारह बजे से (5.6.8) घंटे पीछे है, अतः यह समय हम पृ० 5 के शोधन सहित सा० टाइम में से घटाएंगे।

सा० टाइम 12 बजे—	00	52	03
—	5	06	58
जन्म समय का सा० टाइम—	19	45	05

[(पृ० 5) 5 घंटे के लिए— ,49
6 मि० 8 से० " — ,1
५० से०

स्थानीय समय +	5	·6	8
	5	6	58]

इस तरह जन्मकालीन साइडरियल टाइम 19 घं० 45 मि० 5 से० है।

(iii) लग्न जानना—पृ० 48 पर दी गई दिल्ली के अक्षांश की लग्नसारिणी से उपर्युक्त साइडरियल टाइम के आधार पर लग्न जानेंगे।

	रा०	अंश	कला
19 घं० 44 मि० पर लग्न है	00	12	50
1 मि० 5 से० के लिए +	00	00	12
	00	13	02
1983 का अयनांश संस्कार −	00	00	38
जन्म लग्न स्पष्ट (मेष)	00	12	24

(19 घं० 44 मि० व 48 मि० के लग्न स्पष्ट में 47 कला का अन्तर है। अतः मिनटों का अन्तर लगभग 12 से० लिया गया है।)

उपर्युक्त दोनों उदाहरणों में जन्म समय दोपहर से पहले का था। दोपहर से बाद का समय होने पर स्थानीय समय को 12 घंटे में से नहीं घटाते। उस समय का संस्कार सीधे पृ० 5 की सारिणी के अनुसार कर लेते हैं। बाकी सारी प्रक्रिया वही होती है।

उदाहरण 3 : 25 जनवरी 1983 को सायं 5 बजे का दिल्ली में लग्न जानना है।

भा० स्टै० समय	5	00	00
	−0	21	08
	4	38	52 स्था० म० स०

	घं०	मि०	से०
25 जनवरी का साइडरियल टा०	20	16	26
1983 ,, ,, −	00	00	25
	20	16	01
दिल्ली का संस्कार +	00	00	03
12 बजे का सा० टा०	20	16	04
(पृ० 5) स्थानीय समय शोधन +	4	39	37
जन्म समय का सा० का०	00	55	41

(स्थानीय समय 4-38-52 P.M. के लिए सीधे संस्कार किया। 4 घंटे के लिए 39 से० तथा 38 मि० 52 से० के लिए 6 से० दिया है। अतः कुल 45 से० को स्थानीय समय में जोड़कर उपर्युक्त शोधन किया गया है।)

	रा०	अं०	क०
लग्नसारिणी में 00 52 सा० का० पर लग्न है	03	00	31
3 मि० 41 से० का अन्तर	00	00	47
	3	1	18
अयनांश शोधन	—	00	38
जन्म लग्न स्पष्ट (कर्क)	3	00	40

पीछे हमने बताया था कि सुविधा के लिए राशियों को नम्बर दे रखे हैं। लग्न सारिणी या ग्रहों आदि को स्पष्ट जानने के लिए एफेमेरीज या लग्नसारिणी में दिए गए राशि के अंकों में व्यवहार में एक जोड़कर प्रयोग करना चाहिए। जैसे उदाहरण 3 में लग्न स्पष्ट 3-00-40 है, लेकिन वास्तव में लग्न चौथा (कर्क) है।

इस तरह हमने जन्म लग्न जानने का अभ्यास किया। इस विषय में जिज्ञासुओं को स्वयं समय कल्पित करके लग्न जानने का अच्छी तरह अभ्यास कर लेना चाहिए ताकि व्यावहारिक कठिनाइयां स्वयं दूर होती जाएं। अब हमें लग्न राशि जानने के बाद ग्रहों के रेखांश (ग्रह स्पष्ट) जानने होंगे। ग्रह जिस राशि में जन्म समय में होगा, कुण्डली में भी तत्संख्यक राशि में ही रखा जाएगा। अतः अगले पाठ में हम ग्रह स्पष्ट जानने की प्रक्रिया को समझेंगे।

(3)

ग्रह स्पष्ट जानना

ग्रह स्पप्ट या ग्रहों के रेखांश जानने से हमारा तात्पर्य यह है कि जन्म समय आकाश चक्र में ग्रह किस राशि के कितने अंशों व कलाओं पर स्थित थे। इससे हमें ग्रहों की वास्तविक (True) स्थिति का पता चलता है। इस कार्य के लिए हमें वार्षिक (Annual) एफेमेरीज की आवश्यकता होती है। इनमें प्रत्येक दिनांक को प्रात: 5-30 A.M. के ग्रहों के स्पष्ट (रेखांश) दिए होते हैं। उनसे गणना द्वारा अपने अभीष्ट समय के ग्रहों के रेखांश जाने जाते हैं। इसके लिए हम पिछले पाठ के उदाहरण संख्या 2 को यहां लेते हैं।

5 अप्रैल 1983 मंगलवार प्रात: 7-15 A.M. (I.S.T.), स्थानीय मध्यम समय 6-53-52 A.M., दिल्ली में लग्न था 00-12-24 तथा अभीष्ट साइडरियल टाइम था 19 घं० 45 मि० 5 से०।

(ग्रह स्पष्ट के प्रसंग में भारतीय स्टैन्डर्ड समय को ही प्रयोग किया जाता है।)

सर्वप्रथम हमने श्रीकृष्ण यूनिवर्सल एफेमेरीज का अप्रैल मास का पृष्ठ निकाला। वहां पर 5-30 A.M. के ग्रहों के रेखांश दिए हुए हैं। अभीष्ट समय के रेखांश जानने के लिए हमने

निम्नलिखित दो जानकारियां पहले प्राप्त कीं—

(i) **ग्रहों की भ्रमण गति**—दो दिनों के रेखांशों का अन्तर ही 24 घंटे की ग्रह की भ्रमण गति होती है। हमने अपने अभीष्ट दिन 5 अप्रैल व 6 अप्रैल के रेखांशों का अन्तर निकाल कर भ्रमण गति जानी।

वहां पर एक जगह अप्रैल मास के सायन (Tropical) ग्रह स्पष्ट दिए हुए हैं तथा अगले पृष्ठ पर निरयन (Sidereal) ग्रह स्पष्ट दिए हैं। हमारे लिए निरयन ग्रह स्थिति उपयोगी है। वहां पर 6 अप्रैल के ग्रह के रेखांशों में से 5 अप्रैल के रेखांशों को घटाने पर जो अंश कलात्मक फल प्राप्त होगा, वह उस ग्रह की दैनिक भ्रमण गति होगी। इस तरह प्राप्त गति निम्नलिखित है—

सूर्य	59′5″ या 1°	शुक्र	1° 11′
चन्द्र	11° 50′ 50″	शनि	0° 4′
मंगल	00 47′	राहु	00° 00′
बुध	2° 00′		
बृहस्पति	01′		

चालन (समय-अन्तर) जानना—वहा पर प्रातःकालीन 5-30 A.M. के ग्रह स्पष्ट दिए गए हैं, अतः हमने अपने अभीष्ट समय में से इसे घटाया—

घं०	मि०	
7	15	A.M.
5	30	A.M.
1	45	

यह समय का अन्तर है। अब हम देखते हैं कि 24 घंटे में सूर्य लगभग 1° अंश चला तो 1-45 घं० में कितना चलेगा? इसे जानने का साधारण गणित का तरीका अनुपात पद्धति कहलाता है। पुराने पंडित लोग इसके लिए त्रैराशिक या गोमूत्रिका पद्धति का प्रयोग किया करते हैं। ये पद्धतियां अधिक

गणित क्रिया की अपेक्षा करती हैं। आजकल इसके लिए लघुगणक पद्धति (Logarithms) का प्रयोग किया जाता है। यह लघुगणक सारिणी एफेमेरीज के अन्त में दी गई है। वहां पर पड़ी रेखा पर घंटे या अंश हैं तथा खड़ी रेखा पर कला या मिनट दी गई हैं। उसकी सहायता से हम इस तरह प्रत्येक ग्रह के रेखांश कुछ मिनटों में ही जान सकेंगे, जबकि साधारण गणित से यह क्रिया कम-से-कम 1-2 घंटों की अपेक्षा रखती थी।

सूर्य—सूर्य की दैनिक गति के अंश कलाओं (1°) के नीचे सारणी में यह संख्या दी हुई है—

	1.3802
1.45 मिनट की संख्या को जोड़ा	+ 1.1372
	2.5174

अब इस योगफल को देखा तो पाया कि लघुगणक में इसकी निकटतम संख्या (2.5563) 4 कला के खाने में है। इसका आशय है कि प्रातःकाल 5-30 A.M. से हमारे अभीष्ट समय तक सूर्य के रेखांशों में 4′ का अन्तर आ चुका था। इसे वक्री ग्रह की स्थिति में घटाएंगे तथा मार्गी ग्रह में जोड़ देंगे। ऐसा करने पर 5 अप्रैल के सूर्य (11s 21° 4′ 24″) में 4′ जोड़ने से 7-15 A.M. का सूर्य का रेखांश आया ···11 रा०, 21 अ०, 8 क०, 24 वि०। यही सूर्य स्पष्ट है। इसे अलग से एक जगह नोट कर लिया तथा इसी पद्धति से सारे ग्रहों की स्पष्ट तात्कालिक स्थिति जान ली।

चन्द्र—	12° गति का फल	·3010
	1·45 का ″	+ 1·1372
		1·4382

इसके आधार पर 53′ का अन्तर है, जिसे चन्द्र स्पष्ट में जोड़ा तो तात्कालिक चन्द्र रेखांश हुआ 08s 17° 07′ 06″।

मंगल— 47′ कला गति का फल .4863

समयान्तर + 1.1372

1.6235

इसकी निकटतम संख्या की कलाएं (34′) जोड़कर मंगल का रेखांश प्राप्त किया 00 रा० 6 अ० 31 क० ।

बुध— 2° अंश गति का फल 1.0792

\+ 1.1372

2.2164

इसकी निकटतम संख्यानुसार कलाएं 9′ बुध जोड़ दी 00 रा० 01 अ० 11 क० । यह बुध स्पष्ट हुआ ।

गुरू—गुरू की चौबीस घंटों की गति है 1′ कला । अतः 1 घंटा 45 मिनट में विशेष अन्तर नहीं पड़ेगा । इसलिए बृहस्पति को सीधे एफेमेरीज से ले लिया 7.17.12 ।

शुक्र— 1°.11′ गति का फल 0.3071

1.1372

1.4443

इसके अनुसार 52′ कलाएं जोड़ने से तात्कालिक शुक्र हुआ 00.27.12 ।

शनि—शनि भी मन्द गति 1′ कला से भी कम होने के कारण विशेष प्रगति नहीं करेगा, अतः वैसा ही इसे भी स्वीकार कर लिया 00.8.45

राहु-केतु—राहु की गति 24 घंटे में 1′ कला भी नहीं थी, उस भी वैसा ही ले लिया 2.4.28 ।

केतु राहु से छह राशियां आगे रहता है, अतः राहु में छह जोड़ने से केतु का रेखांश हुआ 8.4.28 ।

अब इन सबकी एक अलग तालिका तैयार कर लेंगे । जो ग्रह जिस राशि में जन्म समय में स्थित है, उसे कुण्डली में भी उसी राशि में रख देंगे तो जन्मकुण्डली तैयार हो जाएगी ।

लग्न कुण्डली बनाना

कुण्डली का आकार—उत्तर भारत व दक्षिण भारत में प्रचलित कुण्डली के आकार में भेद होता है। पहले संक्षेप में इसे समझ लें—

उत्तर भारत की कुण्डली
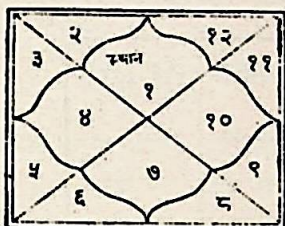
दक्षिण भारतीय कुण्डली

मीन	मेष	वृष	मिथुन
कुम्भ			कर्क
मकर			सिंह
धनु	वृश्चिक	तुला	कन्या

उत्तर भारतीय कुण्डली में लग्न राशि पहले स्थान में लिखी जाती है तथा फिर दाएं से बाएं राशियों की संख्या को स्थापित कर लेते हैं। अर्थात् राशि स्थापना (Anti-Clock-Wise) होती है तथा राशि का सूचक अंक ही अनिवार्य रूप से स्थानों में भरा जाता है। हमारे उदाहरण में लग्न स्पष्ट था 00 रा०, 12 अ०, 24 कला। अर्थात् मेष (पहली राशि) लग्न था।

इसे इस तरह लिखेंगे—ग्रहों को भी स्पष्ट रेखांशों के अनुसार सम्बन्धित राशियों में रखने से लग्न कुण्डली तैयार हो गई—
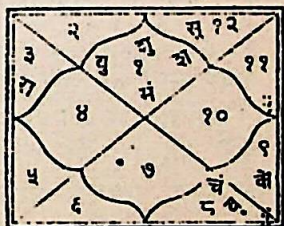
दक्षिण भारतीय कुण्डली में राशियों का स्थान निश्चित रहता है। लग्न जिस राशि का हो उसी के खाने में (लग्न) या (Ascend) लिख देते हैं जिस स्थान में लग्न है उसे ही पहला स्थान मानकर आगे बाएं से दाएं (Clock-wise) दूसरे-तीसरे स्थान मान लिए जाते हैं। राशियों के लिए कोई अंश या अक्षर नहीं लिखा जाता है। राशियों की स्थिति को वैसे ही याद रखना पड़ता है। तदनुसार हमारी उदाहरण कुण्डली इस तरह बनेगी—

सू०	शु० बु० मंगल		स०
के०	च० गु०		

केवल ग्रहों को लिख दिया गया है। राशियों व भावों की स्थिति मस्तिष्क में वैसे ही जमाकर रखनी पड़ती है।

यही आकार भेद सभी कुण्डलियों में होता है। नवांश, चलित, भाव, भावमध्य आदि कुण्डलियां भी किसी एक ढंग से लिखी जा सकती हैं। हम यहां पर उत्तर भारतीय ढंग को अपनाएंगे, यदि पाठक चाहें तो दूसरे ढंग से भी कुण्डली लिख सकते हैं।

(4)

चलित चक्र या भाव चक्र

दशम भाव साधन—चलित चक्र या भाव चक्र ऐसा चक्र है, जिससे हम भावों के मध्य-मान तथा भावों का विस्तार जान लेते हैं। इससे ग्रहों का वास्तविक स्थान तथा स्थानेश जानने में बड़ी सहायता मिलती है। इसे बनाने के लिए हमें सबसे पहले दशम भाव (X House) का रेखांश निकालना होता है। इसके लिए साइडरियल टाइम वही होता है, जिससे हम जन्मकुण्डली निकाल चुके हैं। लग्न सारिणी के पृष्ठ आठ पर दशम भाव के लिए सारिणी दी गई है। यह सारिणी सारे संसार में एक ही है, अर्थात् लग्न सारिणी की तरह अक्षांश भेद से भिन्न नहीं होती है। यहां हम उसी उदाहरण को लेते हैं। 5 अप्रैल 1983 को प्रातः 7-15 A.M. (भा० स्टै० टा०) पर दिल्ली में साइड-रियल टाइम 19 घंटे 45 मि० 5 से० पर लग्न था 00-12-24। इसकी कुण्डली हम पिछले पाठ में बना चुके हैं। अब इसका दसवां भाव निकालना है। दशम भाव सारिणी (Table of the X House) में 19 घं० 44 मि० पर दशम भाव है—

	रा०	अ०	क०
घं० मि० से०	9	1°	6′
(19.45.5)—(19.44)=00. 1. 5 का शोधन +			14′
	9	1	20
(पृ०6) अयनांश संस्कार		00	38
दशम भाव स्पष्ट	9	00	42
+	6	00	00
चतुर्थ भाव स्पष्ट	6	00	42

अन्य भावों का साधन—दशम स्थान में 6 राशियां जोड़ देने से चतुर्थ भाव आ जाता है। इसी तरह लग्न में 6 राशियां जोड़ने से सप्तम भाव आ जाता है। अब इसी दशम व चतुर्थ के स्पष्ट मान के आधार पर हम शेष भावों के रेखांश व सन्धियां निकालेंगे। इसके लिए हमने चतुर्थ भाव में से लग्न को घटाकर शेष को 6 से भाग दिया। जो फल होगा उसे पहले भाव से लेकर चतुर्थ भाव तक बारी-बारी से जोड़ने पर पहले चार भाव व सन्धियां स्पष्ट हो जाएंगी।

चतुर्थ भाव	3	00	42
लग्न घटाया	00	12	24
	2	18	18÷6

= 00 | 13 | 03

लंग्न 00 | 12 | 24+6=6|12|24 VII भाव
+ 00 | 13 | 03
सन्धि 00 | 25 | 27+6=6|25|27 सन्धि
00 | 13 | 03
II भाव 1 | 08 | 30+6=7|8|30 VIII
00 | 13 | 03
सन्धि 1 | 12 | 33+6=7|21|33 सन्धि

00 | 13 | 03

III भाव 2 | 04 | 36+6=8|4|36 IX

00 | 13 | 03

सन्धि 2 | 17 | 39+6=8|17|39 सन्धि

00 | 13 | 03

IV भाव 3 | 00 | 24+6=9|00|42 X

यहां रुककर देखा कि पहले जो चतुर्थ भाव का रेखांश हमने दशम भाव में 6 राशियां जोड़कर प्राप्त किया था, वह इस बाद वाले चतुर्थ के रेखांश से मिलता है, अतः हमारी गणित क्रिया शुद्ध है। यदि इसमें कुछ अन्तर हो तो समझना चाहिए कि पीछे जोड़ने या घटाने में कहीं पर गलती हो गई है। ऐसी स्थिति में सारी संख्याओं का दुबारा से परख लेना चाहिए। अब हमने दशम भाव को लग्न में से घटाया (दशम में से लग्न को नहीं घटाना है) तथा शेष को 6 से विभाजित कर पूर्ववत् दशम भाव में जोड़ते चलें तो हम दसवें भाव से बारहवें भाव तक के रेखांश व सन्धियां जान सकेंगे।

लग्न 00 | 12 | 24

X भाव 9 | 00 | 42

3 | 11 | 42÷6=00|16|57

X भाव→ 9 00 42+6=3|00|42 IV भाव

\+ 00 16 57

सन्धि→ 9 17 39+6=3|17|39 सन्धि

\+ 00 16 57

XI भाव→ 10 04 36+6=4|04|36 V भाव

\+ 00 16 57

सन्धि→ 10 21 33+6=4|21|33 सन्धि

$$
\begin{array}{lrrrl}
 & +\ 00 & 16 & 57 & \\
\hline
\text{XII भाव}\rightarrow & 11 & 08 & 30 & +6=5|8|30 \text{ VI भाव} \\
 & +\ 00 & 16 & 57 & \\
\hline
\text{सन्धि}\rightarrow & 11 & 25 & 27 & +6=5|25|30 \text{ सन्धि} \\
 & +\ 00 & 16 & 57 & \\
\hline
\text{लग्न} & 00 & 12 & 24 & +6=6|12|24 \text{ VII भाव}
\end{array}
$$

यहां फिर पुनरीक्षण करके पूर्व प्राप्त लग्न व इस लग्न भाव को मिला लिया। दोनों समान हैं, अतः हमारी गणित क्रिया शुद्ध हुई है। अब उपर्युक्त भावों व सन्धियों में 6-6 राशियां जोड़ने से उनके सामने वाले अर्थात् सातवें भाव व सन्धियां स्पष्ट हो जाएंगी। अब इन सब भावों व सन्धियों की एक अलग तालिका बना लेनी चाहिए। ग्रह स्पष्ट व भाव स्पष्ट की तुलना से ही चलित चक्र व भावमध्य चक्र बनते हैं। यह हम अब स्वयं परखेंगे।

चलित चक्र बनाना—चलित चक्र जानने के लिए स्पष्ट रेखांश तथा भावों के रेखांशों की तुलना करके यह देखना होता है कि ग्रह का रेखांश भाव के विस्तार में आता है या नहीं ? यदि ग्रह स्पष्ट भाव विस्तार (पिछली सन्धि से आगे+भाव+ अगली सन्धि तक) में आ जाता है तो उसे हम उसी भाव में मान लेंगे। यदि ग्रह भाव विस्तार की पहली सन्धि से भी कम है तो वह पिछले भाव में चला जाएगा। यदि भाव की अगली सन्धि से अधिक रेखांश है तो ग्रह अगले भाव में माना जाएगा। कुछ विद्वान् सन्धि को अलग से लिखते हैं तथा सन्धि के अन्दर आने वाले ग्रह को निर्बल मानकर उसका प्रभाव पिछले व अगले दोनों भावों पर मानते हैं। आजकल आधुनिक विद्वान् इस पक्ष में हैं कि भाव विस्तार के अन्दर आने वाले ग्रह को उसी भाव में

माना जाए, अर्थात् सन्धि का अलग से उल्लेख करने की आवश्यकता नहीं होगी। आधुनिक पद्धति में सरलता है तथा इसमें स्थानों के अधिपति का निर्णय करने में अधिक आसानी होती है। अतः हम अपने पाठकों को पहले सन्धि के विना ही अभ्यास करने की सलाह देते हैं तथा दृढ़ अभ्यासी होने पर बाद में सन्धिगत ग्रहों का निर्णय अलग से ही करें, क्योंकि फलादेश की सूक्ष्मता में उसकी निर्भरता सर्वमान्य है। अस्तु, पिछले उदाहरण के ग्रह स्पष्ट व भाव स्पष्टों को एक स्थान में लिख लें, तब तुलना करने में सुविधा होगी।

ग्रहों के रेखांश—

ग्रह	रेखांश	ग्रह	रेखांश
सूर्य	11.21.8.24	गुरु	07.17.12.00
चन्द्र	8.17.01.06	शुक्र	00.27.12.00
मंगल	00.06.31.00	शनि	00.08.45.00
बुध	00.01.11.00	राहु	02.04.28.00

भाव स्पष्ट—

I	भाव	00·12·24·00	VII	भाव	06·12·24·00
	सन्धि	C0·25·27·00		सन्धि	06·25·27·00
II	भाव	01·08·30·00	VIII	भाव	07·08·30·00
	सन्धि	01·21·33·00		सन्धि	07·21·33·00
III	भाव	02·04·36·00	IX	भाव	08·04·36·00
	सन्धि	02·17·39·00		सन्धि	08·17·39·00
IV	भाव	03·00·42·00	X	भाव	09·00·42·00
	सन्धि	03·17·39·00		सन्धि	09·17·39·00
V	भाव	04·04·36·00	XI	भाव	10·04·36·00
	सन्धि	04·21·33·00		सन्धि	10·21·33·00
VI	भाव	05·8·30·00	XII	भाव	11·08·30·00
	सन्धि	05·25·27·00		सन्धि	11·25·27·00

अब दोनों का विचार करते हुए चलित चक्र या भाव चक्र का निर्माण करेंगे ।
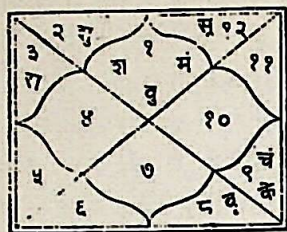
चलित चक्र

नूतन पद्धतिं में केवल शुक्र ने अपना स्थान वदला है। कारण यह है कि शुक्र का रेखांश 00°27'12'00 है। लग्न स्थान का विस्तार 11°25'27'00 से लेकर 00°25'27'00 तक है। इसलिए शुक्र इससे अधिक रेखांश वाला होने के कारण अगले (दूसरे) भाव में लिखा है।

दूसरी कुण्डली में शुक्र तो पूर्ववत् ही स्थान परिवर्तन कर चुका है। सूर्य, चन्द्र व गुरू का विश्लेषण इस प्रकार है—

सूर्य का रेखांश 11°21'08'24 है। बारहवें भाव का मान 11°8'30'00 है, तथा बारहवीं सन्धि का मान 11°25'27'00 है। अतः भाव से अधिक तथा सन्धि से कम होने के कारण इसे अगली सन्धि में रखा गया है।

चन्द्र भी नवीं सन्धि से कम तथा भाव से अधिक है। अतः नवीं सन्धि में लिखा गया है। गुरू भी इसी तरह आठवीं सन्धि में चला गया है। यदि प्राचीन पद्धति से चलित कुण्डली लिखेंगे तो उसमें प्रत्येक भाव के आगे अर्थात् एष्य भाव से पहले सन्धि के लिए स्थान छोड़ा जाता है। यदि ग्रह सन्धिगय हो तो उसे सन्धि में सी प्रदर्शित किया जाएगा।

यह चलित चक्र ही वास्तव में ग्रहों की सच्ची स्थिति बताता है। चलित चक्र में ग्रह जिस भाव में पड़ेगा, वास्तव में फलादेश के समय उसे उसी भाव में स्थित मानकर चलेंगे।

भाव मध्य चक्र :

उपर्युक्त चलित चक्र के अतिरिक्त भावमध्य चक्र भी बना लेना चाहिए। भाव स्पष्ट की तालिका में सन्धियों को छोड़कर भावों की जो रेखांशात्मक स्थिति है, उसकी तुलना जन्म-कुण्डली से की जाती है। जन्म-कुण्डली में जिस भाव में जो राशि थी, यदि भाव स्पष्ट में भी वही राशि पड़े तो भाव वहीं रहेगा, अन्यथा अपना स्थान बदल देगा। संयोगवश हमारे उदाहरण में सभी भाव यथास्थान हैं। यदि जन्म-कुण्डली में दूसरे स्थान की राशि माना वृष है; लेकिन भाव का रेखांश अगली या पिछली राशि (मेष या मिथुन) में पड़ता (ऐसा कभी-कभी होता है) तो हम दूसरे भाव को आगे या पीछे ही मानते तथा उसी के अनुसार भावेश का निर्णय करते।
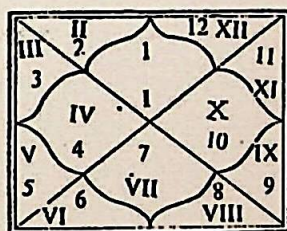
ऐसी स्थिति में यदि दो भाव किसी एक ही राशि में पड़ते हों तो उस राशि का स्वामी दोनों स्थानों का स्वामी समझा जाएगा।

इस जन्म लग्न या राशि चक्र, चलित चक्र, भावमध्य चक्र, ग्रहों एवं भावों के रेखांशों की तालिकाएं जन्म कुण्डली में बना

लेनो चाहिए।

राशिचक्र के आधार पर हमें यह पता चलता है कि ग्रह किस राशि में स्थित है। चलित चक्र से हम यह जान पाते हैं कि वास्तव में ग्रह किस भाव में स्थित है। भाव मध्य चक्र से हमें यह ज्ञात होता है कि किस भाव का स्वामी कौन ग्रह है ? यही कारण है कि सही फलादेश के लिए इन तीनों का दिग्दर्शन आवश्यक होता है। जिज्ञासुओं को इनका खूब अच्छी तरह अभ्यास कर लेना चाहिए। ध्यान रहे, एक-दो उदाहरणों को समझ लेने से ही आप निपुण नहीं होंगे, अपितु अधिक-से-अधिक अभ्यास आपकी कार्यकुशलता में निखार पैदा करेगा।

अभी तक हमने अपनी सारी गणित क्रिया आधुनिक पद्धति के अनुसार की है, जिससे साइडरियल टाइम को ही केन्द्र बिन्दु बनाकर सब गणना की गई है। हमने पीछे बताया था कि पंचांग द्वारा भी यह कार्य किया जा सकता है। उसमें इष्ट काल को ही आधार बताया जाता है। पाठकों की जानकारी के लिए अगले पाठ में हम संक्षेप में उस ढंग से जन्म-कुण्डली बनाना बताएंगे।

(5)

पंचांग द्वारा जन्म-कुण्डली ज्ञान

पंचांग एफेमेरीज की तरह सब जगह यथावत् प्रयुक्त नहीं किए जा सकते हैं। वे अलग-अलग स्थानों के अक्षांश व रेखांश के आधार पर बनाए जाते हैं, जिसका स्पष्ट निर्देश वहां किया होता है। इस पद्धति में भी जन्म-तिथि, जन्म-स्थान व जन्म-समय की सही जानकारी होनी चाहिए। जिस वर्ष में जन्म हो, उसी वर्ष का पंचांग इस प्रयोजन के लिए प्राप्त कर लें। लेकिन इस कार्य में लगने से पहले पंचांग का संक्षिप्त परिचय प्राप्त कर लेना चाहिए। विक्रम सवत् (Era) के आधार पर हिन्दी महीनों (चान्द्र मास) के अनुसार पंचांग में मासों व तिथियों का दिग्दर्शन कराया जाता है। तिथि, वार, नक्षत्र, योग, करण इन पांच चीजों की घड़ी पलों में जानकारी देने के कारण इसे पंचांग कहते हैं। यहां पर सभी गणना घड़ी पलों में होती है। इन पांच अंगों के अतिरिक्त दिनमान, सूर्योदय, सूर्यास्त, अंग्रेजी महीने व तिथियां तथा दैनिक व साप्ताहिक ग्रह स्पष्ट दिए होते हैं। सारी गणना घंटा मिनट में न करके घड़ी पलों में करते हैं, अतः पहले घड़ी पलों के विषय में भी कुछ मानक जानकारी प्राप्त कर लेनी चाहिए—

60 घड़ी = 1 दिन रात 24 घंटे	1 घड़ी = 60 पल
$2\frac{1}{2}$ घड़ी = 1 घंटा	1 पल = 60 विपल
$2\frac{1}{2}$ पल = 1 मिनट	1 विपल = 60 प्रतिविपल
1 घड़ी = 24 मिनट	

(i) **इष्ट काल साधन**—इष्ट काल सारी गणित क्रिया का मेरुदण्ड है। यह जन्म समय ही होता है। जिस दिन जन्म हुआ था, उस दिन सूर्योदय से जन्म समय तक जितने घंटे मिनट बीत चुके थे, वे ही इष्ट काल कहलाते हैं। यह इष्ट काल घड़ी पलों में लिखा जाता है। इष्ट काल जानने के लिए सूर्योदय का समय जानना आवश्यक है। यद्यपि अलग-अलग स्थानों में सूर्योदय व सूर्यास्त का समय अलग-अलग होता है जिसकी जानकारी सूर्य की क्रान्ति को आधार बनाकर गणित क्रिया द्वारा की जा सकती है। हम अपने पाठकों को उस उलझन में डालकर भ्रमित करना नहीं चाहते। अतः हमारा सुझाव है कि दिल्ली तथा इसके निकटवर्ती स्थानों के लिए विश्वविजय पंचांग (श्री हरदेव शर्मा त्रिवेदी, सोलन, हि० प्र०) से प्राप्त कर लेना चाहिए। उसमें सारी जानकारी दिल्ली के अक्षांश व रेखांश के आधार पर दी गई है। वहां से हमें अभीष्ट दिन का सूर्योदय सूर्यास्त काल तथा दिनमान एक जगह नोट कर लेना चाहिए तथा फिर इष्ट काल साधन में लगना चाहिए। यदि किसी दूसरे स्थान का लग्नादि जानना हो तो पंचांग में दी गई **'पंचांग परिवर्तन सारिणी'** के द्वारा उस नगर की जानकारी प्राप्त की जा सकती है। इस सारिणी का प्रयोग करने में कुछ कठिनाई नहीं होगी तथा इसके उपयोग की विधि (मामूली जोड़-घटा) वहीं पर दी होती है। 'पंचांग में कुछ भारतीय नगरों के सूर्योदयास्त दिए हुए होते हैं, यदि उनमें अपना स्थान न हो तो परिवर्तन सारिणी प्रयुक्त करनी चाहिए।'

अतः हम विस्तार में न जाकर दिल्ली नगर के अक्षांश के अनुसार लग्न आदि निकालेंगे। पहले बताया जा चुका है कि इसके लिए 'इष्टकाल' जानना बहुत जरूरी है। इष्ट काल जानने के लिए सूर्योदय, सूर्यास्त, दिनमान—ये तीन चीजें अलग से एक जगह लिख लेनी चाहिएं। अब जन्म-समय, जन्म-तिथि व जन्म-स्थान इन तीनों का उपयोग भी किया जाएगा।

सबसे पहले भारतीय स्टैन्डर्ड समय को पूर्ववत् स्थानीय समय बनाया जाता है। उस स्थानीय समय तक सूर्योदय (स्थानीय) से जितना समय बीत चुका होता है, वही समय (घड़ी पलों में) इष्टकाल कहलाता है। यदि पंचांग में सूर्योदय का समय स्टै० टा० में दिया हो तो इष्टकाल बनाने के लिए भी स्टै० टा० का ही प्रयोग करना चाहिए।

स्थानीय समय साधन के लिए पंचांग में अक्षांशादि सारिणी में अपने जन्म-स्थान के सामने दिए गए स्टैन्डर्ड अन्तर को, वहां दिए गए चिन्ह के अनुसार जोड़ना या घटाना चाहिए। दिल्ली के लिए यह अन्तर 21 मिनट व 08 से० है। अतः भारतीय स्टै० समय में से 21 मि० 8 से० घटा लेने चाहिएं। यह समय स्थानीय मध्यम समय(Local Mean Time)होगा। इसे स्पष्ट करना भी आवश्यक है। याद रखिए, पिछली पद्धति में मध्यम समय को स्पष्ट करना आवश्यक नहीं था। स्पष्ट करने के लिए वेलान्तर संस्कार किया जाता है। वेलान्तर सारिणी विश्व विजय पंचांग में अक्षांशादि सारिणी के साथ ही दी होती है। प्रतिवर्ष इसके छापने का पृष्ठ अलग-अलग हो जाता है, अतः हम पृष्ठ संख्या नहीं दे रहे हैं। संवत् 2042 सन् 1985-86 (आगे उदाहरणों में यही वर्ष प्रयुक्त है) के पंचांग में उक्त सारिणी पृ० 104 से 106 तक दी गई है। वहां जन्मतिथि व जन्म-मास के सामने जितने मिनट दिए हुए हों, उन्हें दिए गए

चिन्ह के अनुसार स्थानीय मध्यम समय में से घटा देने पर स्थानीय स्पष्ट समय ज्ञात हो जाएगा। वेलान्तर संस्कार की उपेक्षा नहीं करनी चाहिए, क्योंकि इसके बिना भारी भूल हो जाएगी। जैसे अक्टूबर के अन्तिम सप्ताह के लिए वेलान्तर—16 मिनट (ऋण) तक हो जाता है।

उदाहरण—दि० 7 जून 1985, तदनुसार आषाढ़ कृष्ण पंचमी शुक्रवार, विक्रम संवत् 2042 शक संवत् 1907 को दोपहर बाद दो बजकर पांच मिनट (I.S.T.) पर दिल्ली में लग्न जानना है। इसके लिए सबसे पहले स्टै० समय को मध्मम समय बनाया—

घं०	मि०	से०	
2	5	00	P. M. (भा० स्टै० टा०)
—0	21	8	
1	43	52	(स्थानीय मध्यम समय)

अब पंचांग में दी गई वेलान्तर सारिणी के अनुसार इस समय का और संस्कार करेंगे; 7 जून के लिए यहां पर दो मिनट ऋण संस्कार दिया है, अतः उक्त समय में से 2 मिनट घटाए—

स्थानीय मध्यम समय	1	43	52	P. M.
वेलान्तर	—	2	00	
स्थानीय स्पष्ट सगय	→1	41	52	

अब जन्मतिथि व मास वाला पृष्ठ 48 निकाला तो वहां से निम्नलिखित तीन विवरण ले लीजिए—

जन्मतिथि का सूर्योदय	5-28 बजे स्टै० टा०
" " सूर्यास्त	7-12 बजे स्टै० टा०
दिनमान	34 घड़ी 20 पल

रात्रिमान	60	00	
दिनमान—	34	20	घटाया
	25	40	रात्रिमान आया।

अब इष्टकाल जानने के चार नियम हैं—

(i) सूर्योदय से 12 बजे दोपहर तक जन्म समय हो तो…
जन्म-समय—सूर्योदय = शेष × 2½ = इष्टकाल। अर्थात् जन्म समय से सूर्योदय घटाकर शेष को 2½ गुना करने से इष्टकाल होगा।

(ii) यदि जन्म-समय 12 बजे से सूर्यास्त के समय तक हो तो…

सूर्यास्त काल—जन्म समय = शेष × 2½ = इष्टकाल। अर्थात् सूर्यास्त काल में जन्म समय घटाकर शेष को ढाई गुना कर देना चाहिए।

(iii) सूर्यास्त से 12 बजे रात के बीच जन्म हो तो…

जन्म समय—सूर्यास्त काल = शेष × 2½ + दिनमान = इष्टकाल, अर्थात् जन्म समय में से सूर्यास्त काल को घटाकर शेष को 2½ गुना कर दिनमान जोड़ देना चाहिए।

(iv) यदि आधी रात से अगले सूर्योदय के बीच जन्म हो तो…

60 घड़ी—(जन्म समय—सूर्योदय = शेष × 2½) = इष्टकाल अर्थात् जन्म समय में से सूर्योदय काल घटाकर शेष को ढाई गुना करके 60 घड़ी में से घटाने पर घटी पलात्मक इष्टकाल हो जाता है।

उपर्युक्त विधियों के अतिरिक्त सीधी व सरल विधि है कि सूर्योदय काल को सीधे जन्म-समय में से घटाकर, जो शेष घंटे व मिनटादि बचें, उन्हें ढाई गुना करने से इष्टकाल हो जाता है। आशय यह है कि सूर्योदय से जन्म समय तक जितने घंटे मिनट

बीते हों, उन्हें ढाई गुना कर लेने से इष्टकाल हो जाता है। इस विधि के अनुसार जन्म-समय को दोपहर बारह बजे के बाद क्रमश: 13-14-15 आदि लिखकर व्यवहार में लाना चाहिए।

हमारे उदाहरण में जन्म-समय स्टै० टा० दो बजकर पांच मिनट दोपहर बाद अर्थात् (P. M.) है। इसके अनुसार हमने जन्म-स्थान दिल्ली का तत्कालीन स्थानीय समय एक बजकर इकतालीस मिनट बावन सैकेण्ड निकाला था। अब हमें देखना है कि पंचांग में सूर्योदय का समय स्टै० टा० में दिया हुआ है। अत: इष्टकाल बनाते समय हमें जन्म के अनुसार इष्टकाल बनाने का आग्रह हो तो सूर्योदय के स्टै० टा० को भी स्थानीय समय संस्कार व वेलान्तर संस्कार करके ही प्रयोग में लाना चाहिए।

	घं०	मि०	
जन्म-समय स्टै० टा०	14	05	बजे P.M.
सूर्योदय —	5	28	बजे घटाया
	8	37	

इसका आशय है कि सूर्योदय से जन्म-समय तक 8 घंटे 37 मिनट बीत चुके थे। इसे स्थानीय समय के अनुसार भी देख लें—

जन्मसमय स्थानीय	13	41	52	बजे
सूर्योदय स्थानीय —	05	04	52	बजे
	08	37	00	

(यहां सूर्योदय के स्टै० टा० में से 21 मिनट 8 से० स्टैन्डर्ड अन्तर व 2 मिनट वेलान्तर के घटाकर उसे स्थानीय समय में बदला गया है।)

इस 8 घंटे 37 मिनट को ढाई गुना करने से हमारा इष्ट-काल हुआ'''21 घड़ी (इक्कीस घड़ी) 32 पल तथा 30 विपल।

(ii) **लग्न साधन**—लग्न साधन के लिए स्थानीय उदयमान, चरखण्ड आदि का साधन करके पलभा ज्ञान द्वारा स्पष्ट सायन (Tropical) सूर्य के आधार पर गणित क्रिया की जाती है। यह क्रिया काफी श्रम व समय की अपेक्षा रखती है। सरल प्रकार यह है कि पंचांग में लग्न सारिणी दो होती है। उसकी सहायता से लग्न स्पष्ट कर लेना चाहिए। विश्वविजय पंचांग में यह सारिणी पृ० 108 पर दी गई है जो दिल्ली व इसके निकटवर्ती स्थानों के लिए प्रयुक्त की जा सकती है। लग्न साधन के लिए हमें जन्मदिन के सूर्य के बीते अंशों को जानना जरूरी होता है। उदाहरण के लिए सूर्य वृष राशि के 22 अंश पर है। लग्न-साधन के लिए प्रातः 5-30 बजे के स्पष्ट सूर्य को भी बिना किसी परिवर्तन के प्रयोग में लाया जा सकता है। सारिणी में वृष राशि के 22 अंश के नीचे संख्या है···(10-11)। इसे अपने इष्टकाल में जोड़ा :

	घड़ी	पल	विपल	
इष्टकाल	21	32	30	
सारिणी की संख्या	10	11	00	+
	31	43	30	

यह संख्या जहां मिले वही हमारा लग्न है। यह संख्या कन्या राशि के अंश के नीचे मिली। अतः यही हमारा लग्न है। विपल लग्न साधन में छोड़ने से विशेष अन्तर नहीं पड़ता। अब हमारा लग्न स्पष्ट है—

रा०	अ०	क०	वि०
05	16	00	00

[यदि उक्त संख्या ठीक न मिले तो उसकी निकटवर्ती कम संख्या को एक तरफ लिख लेना चाहिए। तब अगले कोष्ठक व पिछले कोष्ठक की संख्या का अन्तर कर लेना चाहिए। जो शेष बचे वह एक स्थान पर लिख देना चाहिए। फिर पिछले कोष्ठक

की संख्या को अपने इष्टकाल व सारिणी के अंक के योग में से घटा लेना चाहिए। इस शेष को 60 से गुणा कर पहले शेष से भाग देना चाहिए। लब्धि कलाएं होंगी। यदि कुछ शेष हो तो उसे 60 से गुणा कर पुनः पूर्व संख्या का भाग देने से विकलाएं होंगी। कल्पना कीजिए कि हमारा इष्टकाल व सारिणी के अंक का योगफल 30-39 आता है, तब यह संख्या सारिणी में कहीं नहीं मिलती। कन्या राशि के 10 अंश के नीचे 30।34 संख्या है तथा 11 अंश के नीचे 30।46 संख्या है। इन दोनों का अन्तर किया :

30।46—30।34 = 00।12

अब 10 अंश की संख्या को अपने योगफल में से घटाया—

30-39—30-34 = 00-5

इसे 60 से गुणा किया—5 × 60 = 300 ÷ 12 = 25 शेष 00

अतः लग्न स्पष्ट होगा 05।10।25।00।]

अब पुनः अपने उदाहरण को लें। हमारा लग्न स्पष्ट था—05।16।00।00। अब कुण्डली लिख लेंगे। कुण्डली में ग्रहों को उन्हीं राशियों में लिखा जाएगा, जहां वे जन्म-समय में होंगे। इसके लिए पंचांग में दैनिक ग्रह स्पष्ट दिए होते हैं। हम वहां से अभीष्ट तिथि (7 जून) के ग्रह स्पष्ट के अनुसार कुण्डली में उनको यथास्थान लिख लेंगे। यद्यपि हमने अपने इष्टकाल के ग्रह स्पष्ट नहीं किए हैं तथापि कुण्डली निर्माण के लिए पंचांग के ग्रह स्पष्ट से काम चलाया जाता है। कारण यह है कि इतनी देर से ग्रह की राशि में अन्तर नहीं पड़ेगा। यदि उसी दिन ग्रह राशि बदल रहा हो तो पंचांग में उसका राशि परिवर्तन का समय दिया होता है। अब हमारा इष्टकाल यदि इससे पहले हो तो स्वभावतः ग्रह उसी राशि में तथा इष्टकाल आगे हो तो अगली राशि में लिख लेना चाहिए।

हमारे उदाहरण की जन्म-कुण्डली इस प्रकार होगी—
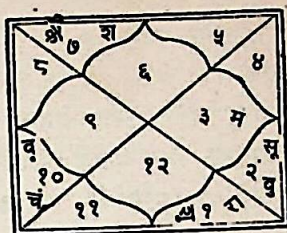
(iii) **जन्म नाम या राशि जानना**—यह जानने के लिए हमें यह पता लगाना होगा कि जन्म के समय किस नक्षत्र का कौन-सा चरण वर्तमान था। जो भी चरण आएगा, उसी चरण के अक्षर से शुरू होने वाला कोई सुन्दर तथा लिंग (लड़का, लड़की) के अनुकूल नाम कल्पित कर लिया जाता है। यही जन्मनाम कहलाता है। इसी के अनुसार जो राशि हो, अर्थात् उक्त नक्षत्र का वह चरण जिस राशि के अन्तर्गत पड़ता हो, वही जन्मराशि होती है। यह जन्म-राशि चन्द्रमा की राशि से भिन्न नहीं होती। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि जन्म-समय में चन्द्रमा जिस राशि पर होता है, वही जातक की जन्म राशि होती है। नक्षत्र का वर्तमान चरण जानने के लिए हमें नक्षत्र का कुल मान (घड़ी पलों में) तथा गत मान जानना होगा। नक्षत्र के कुल विस्तार या मान का शास्त्रीय नाम **'भभोग'** है। **'भ'** यानि नक्षत्र का **'भोग'** यानि भोगने योग्य समय। नक्षत्र के बीते हुए मान को **'भयात'** कहते हैं 'भ' नक्षत्र का 'यात' यानि गया हुआ समय। कहीं-कहीं इन्हें क्रमशः **सर्वर्क्ष** तथा **भुक्तर्क्ष** भी कहा गया होता है, इससे संशय में नहीं पड़ना चाहिए। भयात व भभोग के जानने की विधि यह है :

पंचांग में जन्मतिथि के सामने उस दिन का नक्षत्र तथा

उसकी घड़ियां दी होती हैं। वहां से गत नक्षत्र व वर्तमान नक्षत्र के घड़ी पलों को अलग से लिख लेना चाहिए। उस दिन के नक्षत्र की घड़ियां यदि अपने इष्टकाल की घड़ियों से अधिक हों तो उसे ही गत नक्षत्र तथा अगले नक्षत्र तथा अगले दिन के सामने दिए नक्षत्र को वर्तमान नक्षत्र जानना चाहिए।

भयात भभोग जानना—गत नक्षत्र के घड़ी पलों को 60 घड़ी में से घटाकर शेष को दो स्थानों में रख लेना चाहिए। एक स्थान पर उसमें अपना इष्टकाल जोड़ देने से 'भयात' हो जाएगा। दूसरे स्थान पर उसमें वर्तमान नक्षत्र की घड़ियों को जोड़ देने से 'भभोग' हो जाएगा।

भभोग के चार समान हिस्से करके देखना चाहिए कि हमारे इष्टकाल की घड़ियां किस भाग में पड़ती हैं। जिस भाग में वे पड़ें, वही जन्म नक्षत्र का वर्तमान चरण होगा।

प्रस्तुत उदाहरण में आषाढ़ कृष्ण पंचमी शुक्रवार को श्रवण नक्षत्र 46 घड़ी 15 पल है। हमारा इष्टकाल (21-32-30) इसके अन्तर्गत है, अतः यह वर्तमान नक्षत्र है। गत नक्षत्र उ० षा० 45।55 है। इसे 60 में से घटाया—

	60	00	00	
	45	55	00	
	14	05	00	
इसमें इष्टकाल जोड़ा तो+	21	32	30	
	35	37	30	भयात हुआ।

उपर्युक्त शेष में वर्तमान नक्षत्र जोड़ने से भभोग हुआ :

	14	05	
वर्तमान नक्षत्र—	46	15	
	60	20	भभोग हुआ

भभोग का मान 67 घड़ी तक भी हो सकता है। भयात

यदि 60 घड़ी से अधिक आए तो उसमें से 60 घटाकर ही प्रयोग करना चाहिए। अब भभोग का ¼ हिस्सा 15 घड़ी 5 पल है, अतः यही पहले चरण की सीमा है। 30-10 तक दूसरा चरण, 45-15 तक तीसरा चरण है तथा शेष घड़ियां चौथे चरण की हैं। अतः जन्म-नक्षत्र श्रवण का तीसरा चरण हुआ। श्रवण के तीसरे चरण का अक्षर 'खे' है। यही जन्म-नाम का आदि-अक्षर होगा। इसी अक्षर के आधार पर परम्परागत ढंग से लिखी जाने वाली जन्मपत्री में वर्ण, योनि, वर्ग व नाड़ी आदि लिखी जाती हैं। इसके लिए आवश्यक चार्ट विश्वविजय पंचांग के पृ०84 पर दिया हुआ है। इन वर्ण, योनि व वर्ग आदि का उपयोग विवाह के लिए वर व कन्या की जन्मपत्री मिलाने के प्रसग में मुख्य रूप से होता है।

(iv) **ग्रह स्पष्ट जानना**—ग्रह स्पष्ट जानने के लिए गोमूत्रिका या त्रैराशिक पद्धति का प्रयोग किया जाता है। पंचांग में साप्ताहिक, पाक्षिक या दैनिक स्पष्ट ग्रह दिए होते हैं। सूक्ष्म ग्रह स्पष्ट करने के लिए गोमूत्रिका रीति का प्रयोग किया जाता है। यदि पंचांग में दैनिक ग्रह स्पष्ट न दिए हों तो इसी रीति का प्रयोग अधिक उपयुक्त होता है। यह रीति थोड़ी जटिल है तथा प्रारम्भिक स्तर पर इसके द्वारा ग्रह स्पष्ट जानने में कठिनाई हो सकती है। इसका उदाहरण हम आगे दे रहे हैं।

यदि दैनिक ग्रह स्पष्ट दिए गए हों तो त्रैराशिक रीति का उपयोग सरल होता है। यह पद्धति आजकल के गणित की अनुपात पद्धति ही है। इसके लिए दो दिनों के स्पष्ट ग्रहों का अन्तर करके ग्रह की दैनिक गति जान ली जाती है। फिर पंचांग में जिस समय के ग्रह स्पष्ट दिए हों, उस समय को अभीष्ट जन्म समय में से घटा लेना चाहिए। यह चालन कहलाता है। विश्वविजय पंचांग में प्रातः 5-30 (स्टैं० टा०) के दैनिक स्पष्ट ग्रह

दिए होते है। चालन और गति के आधार पर त्रैराशिक या गोमूत्रिका द्वारा ग्रह स्पष्ट जाने जा सकते हैं। अपने पूर्व उदाहरण के आधार पर इसे समझेंगे।

हमारा इष्टकाल दोपहर के वाद दो बजकर पांच मिनट का है। इस समय में से दैनिक स्पष्ट ग्रह के समय घटा लेंगे—

14	05	P. M.
—5	30	P. M.
8	35	घंटे (+) धन चालन है।

अर्थात् इसके आधार पर प्राप्त निष्कर्षों को हम पंचांगस्थ ग्रह स्पष्ट में जोड़ देंगे।

(A) सूर्य स्पष्ट—

	रा०	अं०	क०	वि०	
8 जून का सूर्य स्पष्ट	1	23	30	6	
7 जून " "	1	22	32	43	घटाया
	0	0	57	23	दैनिक गति

अब त्रैराशिक (अनुपात) विधि से जानेंगे कि चौवीस घंटे (60 घड़ी) में सूर्य 57 कला व 23 विकला चला तो हमारे चालन के समय आठ घंटे पैंतीस मिनट में कितना बढ़ा होगा ? जो फल मिलेगा उसे पंचांगस्थ ग्रह स्पष्ट (7 जून) में जोड़ देने से तत्कालीन ग्रह स्पष्ट हो जाएगा। गणित की सुविधा के लिए इसे 58 कला भी माना जा सकता है, क्योंकि विकलाओं के इतने अन्तर से विशेष भिन्नता नहीं होगी।

24 घंटे : 58 कला :: (8-35) घंटे : ?

इसे इस तरह भी लिख सकते हैं—

1440 मिनट : 58 कला :: 515 मिनट : ?

इसके लिए— $\frac{58 \times 515}{1440} = \frac{29870}{1440} = $ 20 कला 44 विकला

धन चालन व मार्गी ग्रह होने से हम इसे 7 जून के प्रातः-कालीन सूर्य स्पष्ट में जोड़ देंगे—

```
    1  22 32 43
        + 20 44
    -----------
    1  22 53 27 सूर्य स्पष्ट
```

इसे और सरल ढंग से जानने के लिए हम यह प्रकार अपना सकते हैं—

24 घंटे में गति है	58 कला
12 घंटे में होगी	29 कला
6 घंटे में "	14.30
3 घंटे "	7.15
2 घंटे "	4.50
1 घंटे "	2.25
35 मिनट में (लगभग)—	1.15

अब हमारा चालन 8 घंटे 35 मिनट का है तो—

6 घंटे की गति	14.30
2 घंटे " "	4.50
35 मिनट "	1.15 +
	20.35

यह फल हमारे पूर्वागत फल 20.44 के लगभग बराबर है, अतः सरलता की दृष्टि से ग्रह स्पष्ट करने में यह विधि भी अपनायी जा सकती है। मन्द ग्रहों के सन्दर्भ में तो विकलाओं की सटीकता और भी बढ़ जाएगी।

(B) मंगल स्पष्ट—

```
8 जून का मंगल स्पष्ट  2 । 5 । 23 ।  3
7 जून    "      "    2 । 4 । 42 । 55 घटाया
                     -----------------
                     0 । 0 । 40 ।  8 दैनिक गति
```

आनुपातिक क्रम से—

8 घंटे की गति		13 कला	23 विकला	
35 मिनट की गति		+	52 विकला	
		14	15	
7 जून के मंगल में जोड़ा	2	4 42	55	
		+ 14	15	
	2	4 57	10	मंगल स्पष्ट

(C) बुध स्पष्ट—

8 जून का बुध स्पष्ट	1 24 00 42	
7 जून " "	1 21 48 37	घटाया
	2 12 5	दैनिक गति

अर्थात् 132 कला व 5 विकला है तो—

8 घंटे का अनुपात	44 कला		
35 मिनट " "	+ 2 "	50	विकला
	46	50	

इसे 7 जून के बुध स्पष्ट में जोड़ा—

1 21 48 37	
+ 46 50	
1 22 35 27	बुध स्पष्ट

(D) गुरू स्पष्ट—गुरू वक्री है, अर्थात् यह विपरीत गति से चल रहा है। इसलिए—

7 जून का गुरू स्पष्ट	9 23 18 25	
8 जून " "	−9 23 17 55	घटाया
	00 00 00 30	विकला (दैनिक गति)

8 घंटे का गति अनुपात	10 विकला	
35 मिनट " "	+ 1 "	(लगभग)
	11 विकला	

इसे 7 जून के गुरु स्पष्ट में से घटाया

```
  9 23 18 25
 —        11
  9 23 18 14 गुरू स्पष्ट
```

(E) शुक्र स्पष्ट—

8 जून का शुक्र स्पष्ट	00 7 50 19	
7 जून " "	00 6 55 19	घटाया
	55 00	दैनिक गति
8 घंटे की गति की अनुपात	18 कला	
35 मिनट " "	1 10 +	
	19 10	

इसे 7 जून के शुक्र में जोड़ा—

```
  00  6 55 19
  00 00 19 10 +
  00  7 14 29 शुक्र स्पष्ट
```

(F) शनि स्पष्ट—वक्री होने के कारण विपरीत क्रिया की जा रही है।

7 जून का शनि स्पष्ट	6 29 35 2	
8 जून " "	6 29 31 8	घटाया
	3 54	दैनिक गति
8 घंटे की गति का अनुपात	1 18	
35 मिनट " "	+ 0 05	
	1 23	इष्ट गति

इसे 7 जून के शनि में से घटाया—

6 29 35 2
— 1 23
1 29 33 39 शनि स्पष्ट

(G) राहु स्पष्ट—राहु व केतु की गति 3 कला 11 विकला प्रायशः रहती है। अतः 8 घंटे की गति होगी—

क० वि०
1 4
35 मिनट की गति 4 विकला
1 8 इष्ट गति

इसे 7 जून के राहु में से घटाया—

00 । 23 । 10 । 58
— 1 । 8
0 । 23 । 9 । 50 राहु स्पष्ट

राहु में 6 राशि जोड़ देने से केतु स्पष्ट हो जाता है—

6 । 23 । 9 । 50 केतु स्पष्ट

गोमूत्रिका द्वारा ग्रह स्पष्ट करना- जो लोग ग्रह स्पष्ट में अति सूक्ष्मता लाना चाहते हों वे गोमूत्रिका रीति से ग्रह स्पष्ट कर लें—

पहले हम मंगल स्पष्ट कर चुके हैं, उसे ही गोमूत्रिका रीति से स्पष्ट करके देखते हैं—

पहले 8 घंटे 35 मिनट को 2½ से गुणा कर घड़ी पलों में बदल लिया—

8-35 × 2½ = 21 घड़ी 27 पल

अब इसे मंगल की गति से इस तरह गुणा किया—

	गति	40 । 8	
चालन	21	840 । 168	(21 के अंक का गुणन फल)
	27	+ 1080 । 216	(27 के अंक " ")
		840 । 1248 । 216 ÷ 60	
		3 लब्धि, 36 शेष	

शेप को एक स्थान पर लिखा और लब्धि को अगले अंक में जोड़कर पुन: 60 से भाग किया तो—

840।1251 ÷ 60 = लब्धि 20, 51 शेष

पुन: वह क्रिया दोहराई—

840 + 20 लब्धि = 860 ÷ 60 = 14 लब्धि 20 शेष

इसे इसी क्रम से लिख लिया तो संख्या हुई—

क०	वि०	—	—
14	20	51	36

इसे 7 जून के स्पष्ट मंगल में जोड़ देने से तत्कालीन मंगल स्पष्ट हो जाएगा—

2 । 4 । 42 । 55
14 । 20

2 । 4 । 57 । 15 मंगल स्पष्ट (गोमूत्रिका विधि)
2 । 4 । 57 । 10 " " (त्रैराशिक विधि)

हमारा चालन यहां घड़ी पलों में था। अत: हमारे निष्कर्ष (14 । 20 । 51 । 36) क्रमश:, कला, विकला व प्रति विकलात्मक थे। जहां पर साप्ताहिक ग्रह स्पष्ट दिए होते हैं वहां चालन तीन अंकों में आता है तथा पहला अंक दिन होता है। यही कारण है कि तब प्राप्त निष्कर्षों को क्रमश: अंश, कला, विकला मानकर चलते हैं। पंचांग में यदि इष्ट दिन से आगे के ग्रह स्पष्ट हों तो ऋण चालन (−) तथा पीछे के हों तो धन चालन (+) होता है। खूब अभ्यस्त हो जाने के बाद गोमूत्रिका रीति

से भी जिज्ञासुओं को अभ्यास कर लेना चाहिए।

चन्द्र स्पष्ट करने की विधि—यद्यपि चन्द्र स्पष्ट करने के लिए भी त्रैराशिक विधि का प्रयोग किया जा सकता है, लेकिन चन्द्रमा शीघ्रगामी ग्रह है। इसलिए इसकी दैनिक गति काफी होती है। इसे स्पष्ट करने के लिए आचार्यों ने दूसरा ढंग बताया है जो पीछे बताए गए भयात व भभोग पर आधारित है। यहां यह बात समझ लेनी चाहिए कि पंचांग में जो दैनिक नक्षत्र दिए होते हैं, वे वास्तव में चन्द्रमा के नक्षत्र होते हैं। यदि किसी दिन कृत्तिका नक्षत्र हो तो उस दिन चन्द्रमा कृत्तिका नक्षत्र में है, यही समझना चाहिए। उन्हें संक्षेप में चन्द्र नक्षत्र न कहकर व्यवहार में केवल नक्षत्र ही कहते हैं। नक्षत्र के जन्म-समय जितनी घड़ियां बीत चुकी हैं, वे ही भयात कहलाती हैं, उसी से चन्द्रमा की खगोलीय स्थिति जानी जा सकती है। सारे खचक्र को 27 नक्षत्रों में बांटा गया है तथा खचक्र 360° अंश का होता है। यही कारण है कि एक नक्षत्र का मान 13° अंश व 20′ कला माना है। पाश्चात्य पद्धति में एफेमेरीज द्वारा चन्द्र स्पष्ट के अंश व कलाओं के आधार पर ही नक्षत्र व उसका चरण जान लिया जाता है। नक्षत्र का एक चरण 3° अंश व 20′ कला के बराबर होता है। पंचांग द्वारा पहले हमने भयात व भभोग निकाल रखा है, उसे एक स्थान पर अलग-अलग लिख लेते हैं। इन्हें पलात्मक बना लेना चाहिए। पलात्मक भयात को 60 से गुणा कर पलात्मक भभोग का भाग देंगे तो लब्धि घड़ी होगी। शेष को बार-बार 60 से गुणा कर इसी तरह भभोग से भाग देकर क्रमशः घड़ी, पल व विपल निकाल लेने चाहिएं। अब अश्विनी नक्षत्र से गत नक्षत्र तक गिनकर जो संख्या हो उसे 60 से गुणा कर पूर्वागत घड़ियों में जोड़ लेना चाहिए। इस योगफल को 2 से गुणा कर 9 का भाग

देने से स्पष्ट चन्द्र ज्ञात हो जाएगा।

हमारे पिछले उदाहरण में वर्तमान नक्षत्र श्रवण है तथा भयात व भभोग क्रमश: 35।37 व 60।20 हैं। इन्हें 60 से गुणा कर सर्वप्रथम पलात्मक वनाया—

भयात—35।37 × 60 = 2137 पलात्मक भयात

भभोग—60।20 × 60 = 3620 पलात्मक भभोग

अव पलात्मक भयात को 60 से गुणा कर पलात्मक भभोग का भाग दिया—

2137 × 60 = 128220 ÷ 3620 = 35 लब्धि (अंश)

शेष 1520 × 60 = 91200 ÷ 3620 = 25 लब्धि (कला)

शेष 700 × 60 = 42000 ÷ 3620 = 11 लब्धि (विकला)

शेष 180 को छोड़ दिया।

अव गत नक्षत्र तक अश्विनी से गिना तो संख्या हुई—21, इसे 60 से गुणा किया तो गुणनफल हुआ—1260।

उक्त गुणनफल को पूर्वागत अंश, कला, विकला में जोड़ा—

1260
+35. 25. 11
1295. 25. 11

इसे 2 से गुणा कर 9 का भाग दिया—

1295.25.11 × 2 = 2590।50।22 ÷ 9 =

= 287।52।16 यही हमारा अंशात्मक चन्द्र स्पष्ट है।

अंशों (287) को 30 से भाग दिया तो फल आया 9 राशि 17 अंश 52 कला 16 विकला। यह राश्यात्मक चन्द्र स्पष्ट हुआ।

(9 से भाग देते समय लब्धि को स्वीकार करते हुए हर वार शेष को 60 से गुणा कर अगली संख्या जोड़कर भाग दिया जाता है।)

आशय यह है कि जन्म समय चन्द्रमा मकर राशि के

17 अंश 52 कला 16 विकला पर था।

चन्द्रमा की गति निकालना—चन्द्र की गति जानने के लिए 2880000 में पलात्मक भभोग का भाग देने से लब्धि कला तथा शेष को 60 से गुणा कर पुनः पलात्मक भभोग का भाग देने से लब्धि विकला होती है। यही कला विकलात्मक चन्द्र गति होती है।

2880000÷3620=795 लब्धि

शेष 2100×60=126000÷3620=34 लब्धि, शेष को छोड़ दिया। अब 795 कला 34 विकला चन्द्रमा की गति है।

इस तरह ग्रह स्पष्ट करके उनकी अलग से तालिका बना लेनी चाहिए।

चलित चक्र निर्माण

चलित चक्र बनाने के लिए पिछली पद्धति की तरह यहां भी बारह भाव तथा उनकी सन्धियां जाननी आवश्यक हैं। बारह भाव स्पष्ट करने के लिए पूर्ववत् 'दशम भाव' साधन किया जाता है। दशम भाव साधन करने के लिए पंचांग में 'दशम लग्न सारिणी' दी होती है। इसकी सहायता से सरलता से दशमभाव निकाला जा सकता है। पीछे लग्न साधन के लिए हमने जन्म-तिथि के सूर्य की राशि व अंशों के आधार पर सारिणी से प्राप्त संख्या में अपना इष्टकाल जोड़ा था। यह योगफल अब पुनः हमारे काम आएगा—

	घ०	पल	
सूर्यफल तथा इष्टकाल का योग—	31	43	
	— 15	00	घटायी
दशम भाव की संख्या है—	16	43	

अब यह संख्या हमने दशम लग्न सारिणी में देखी तो कहीं

नहीं मिली। हां, मिथुन राशि के 17 अंशों के नीचे संख्या है—

— 16 । 48
16 अंशों के नीचे संख्या है— 16 । 37 का अन्तर किया
00 । 11 पल

अर्थात् लग्न के 1 अंश पर 11 पलों का अन्तर है। अब लग्न के साधन के समय अपनायी गई विधि से कला विकला जान लेंगे। 16 अंश वाली संख्या को अपने योगफल में से घटाया—

16 । 43
— 16 । 37
00 । 06 × 60 = 360 ÷ 11 = 32 कला

शेष 8 को 60 से गुणा कर 11 का भाग दिया तो लब्धि विकला हुई—

8 × 60 = 480 ÷ 11 = 43 विकला

इस तरह दशम लग्न स्पष्ट हुआ— 2 । 16 । 32 । 43
+ 6 । 00 । 00 । 00
8 । 16 । 32 । 43 चतुर्थ भाव

इसी तरह लग्न में 6 राशि जोड़कर सप्तम भाव ज्ञात कर लिया। आगे की विधि पिछली पद्धति की तरह अर्थात् चतुर्थ भाव में से लग्न को घटाकर शेष को 6 से भाग देकर जो फल आए, वह क्रमशः लग्न में जोड़ते चलेंगे तो उसी क्रम से सन्धि, दूसरा भाव, सन्धि, तीसरा भाव आदि स्पष्ट होते जाएंगे। इस तरह चतुर्थ भाव तक स्पष्ट कर लेना चाहिए। फिर लग्न व चतुर्थ के अन्तर के छठे हिस्से को 30 अंशों में घटाकर जो शेष बचे उसे आगे सप्तम भाव तक जोड़ते चलेंगे तो भाव व सन्धियां स्पष्ट हो जाएंगी। इस समय हमारे पास लग्न से सप्तम भाव

तक के स्पष्ट होंगे। अब इनमें क्रमशः पूर्ववत् 6-6 राशियां जोड़ने से आठवें, नवें, दसवें आदि भावों व सन्धियों को भी ज्ञात कर लेंगे। इसके बाद ग्रह स्पष्ट व भाव स्पष्ट की तुलना द्वारा ग्रहों का चलित तय किया जाएगा। यह विषय हमने पीछे पाठ चार में उदाहरण सहित समझाया है।

इस तरह जन्म कुण्डली, चन्द्र कुण्डली (चन्द्र राशि को लग्न मानकर) ग्रह, भाव स्पष्ट व चलित चक्र बना लेना चाहिए।

(6)

नवांश कुण्डली

नवांश कुण्डली का महत्त्व—नवांश क्या है ? लग्न कुण्डली, जन्म राशि कुण्डली तथा चलित चक्र के पश्चात् सूक्ष्म फलादेश के लिए विद्वानों ने षड्वर्ग, सप्तवर्ग या दशवर्ग बनाने का निर्देश दिया है। लग्न, होरा, द्रेष्काण, नवांश, द्वादशांश, त्रिशांश ये 6 कुण्डलियां षड्वर्ग कहलाती हैं। इनमें सप्तमांश को जोड़ देने से सप्तवर्ग होता है तथा दशमांश, षोडशांश एवं षष्ट्यंश मिलकर दशवर्ग कहे जाते हैं। फलित ज्योतिष के ग्रन्थों में इनके विषय में बहुत कुछ कहा गया है। जातकाभरण के उल्लेख के अनुसार जन्म लग्न से अपने शरीर, होरा से धन सम्पत्ति, द्रेष्काण से भाइयों का सुख, नवांश से स्त्री-सुख, द्वादशांश से माता-पिता का सुख तथा त्रिशांश से अपने कष्ट का विचार करना चाहिए। पुराने ढर्रे के ज्योतिषी लोग इन वर्गों को बहुत महत्त्व देते थे तथा जन्म पत्रों में इनको अवश्य लिखा करते थे। वास्तव में सप्तवर्ग या षड्वर्ग के आधार पर ही ग्रह के वास्तविक बलाबल का विचार भारतीय ज्योतिष में किया जाता है। आजकल कई कारणों से जन्म पत्रों में, विशेष रूप से आधुनिक परिपाटी के ज्योतिषी इन सबको लिखना आवश्यक नहीं समझते। कारण यह है कि आजकल संक्षेप का जमाना है,

व्यक्ति कम समय तथा कम स्थान में अधिक जानकारी भर लेना चाहता है, यह यान्त्रिक युग का प्रभाव है। यही कारण है कि आधुनिक लोग इन सबके स्थान पर नवांश कुण्डली को ही लिख लेते हैं। वे लोग नवांश कुण्डली को जन्म-पत्री का एक अनिवार्य अंग समझते हैं। हमारा विचार है कि नवांश कुण्डली की सहायता के बिना ग्रहों की वास्तविक शक्ति का अनुमान लगाना अंधेरे में तीर चलाना है। ऐसी बात नहीं है कि पुराने समय में कभी नवांश के महत्त्व को नहीं पहचाना गया हो। प्राचीन आचार्यों ने अलग-अलग वर्गों को अलग-अलग अनुपात से महत्त्वपूर्ण माना है। जन्म लग्न से आधा महत्त्व नवांश को तथा नवांश का भी आधा, अर्थात् जन्म लग्न का चौथाई महत्त्व बाकी वर्गों को देना चाहिए, यह मत है। लेकिन 'फलदीपिका' में साफ कहा गया है कि नवांश कुण्डली को फलादेश में वही स्थान प्राप्त है जो स्वयं जन्म लग्न कुण्डली का है। कुछ विद्वानों का मत है कि नवांश चक्र तो राशिचक्र से अधिक महत्त्वपूर्ण है तथा स्थूल से सूक्ष्म की ओर चलने वाली भारतीय चिन्तन पद्धति का परिचायक है। वे लोग कहते हैं कि लग्न यदि पेड़ है तो नवांश उसका फल है। पेड़ के आकार प्रकार से फल की गुणवत्ता प्रायः प्रभावित नहीं होती है। दिखने में बड़े तथा सुन्दर वृक्ष पर कड़वा, गुठली वाला तथा छोटा फल भी लगता है जैसे जंगली आम या नीम। इसके विपरीत रूखे-सूखे कान्तिहीन पेड़ पर भी मीठा व पौष्टिक फल लग सकता है जैसे—खजूर। कहने का तात्पर्य यह है कि जिस तरह कुरूप शरीर में सुन्दर हृदय तथा उच्च विचार निवास कर सकते हैं तथा सुन्दर शरीर में पापपूर्णता व छलावे का अधिष्ठान हो सकता है, उसी तरह कमजोर तथा हीन दिखने वाले लग्न का नवांश (वास्तविक क्रियाशीलता, आत्मा) बलवान हो सकता है तथा लग्न में भी कमजोर नवांश

उसके महत्त्व व प्रभाव को गुप्त रोग की तरह नष्ट कर देता है। केवल लग्न कुण्डली देखकर फल कहने वाले ज्योतिषी प्रायः शास्त्र की निन्दा का कारण बनते हैं। आशय यह है कि राशि (लग्न) कुण्डली शरीर है तो नवांश उसकी आत्मा है और आत्मा के बलाबल से ही वास्तविक शक्ति का अहसास हो सकता है। दिखने में कांच या पत्थर दिखने वाला टुकड़ा हीरा भी हो सकता है तथा हीरा दिखने वाला 'कांच' भी निकल सकता है। अतः जो दिखता है, आवश्यक नहीं कि वह वास्तव में भी वैसा ही हो। यही कारण है कि विद्वानों ने सारे वर्गों में से 'नवांश' को सबसे अधिक महत्त्व दिया है। दक्षिण भारतीय तथा पाश्चात्य ज्योतिषी तो नवांश के विना फलकथन की कल्पना भी नहीं कर सकते हैं। कारण साफ है, लग्न में यदि ग्रह उच्च राशि में या बलवान् है तथा नवांश में वह नीच राशि में है तो वह निर्बल होकर नीच राशि का ही फल देगा। तात्पर्य यह है कि नवांश की स्थिति के अनुसार ही ग्रह की असली ताकत का पता लगेगा। यद्यपि ग्रहों का वास्तविक बल जानने में अन्य वर्ग भी महत्त्वपूर्ण है, लेकिन नवांश उनमें अधिक प्रभावकारी है। अतः आजकल के विद्वानों ने 'सार सार को गहि रहै' वाली उक्ति को सार्थक करते हुए लग्न की आत्मा रूप नवांश को ही ग्रहण किया है। अतः जिज्ञासुओं को 'नवांश' कुण्डली भी बना लेनी चाहिए।

नवांश क्या है—राशि का नौवां भाग नवांश कहलाता है। कुछ विद्वान् इसे नवमांश भी कहते हैं। शाब्दिक अर्थ में थोड़ा अर्थ-भेद होने पर भी दोनों का अन्ततः प्रभाव समान है। एक राशि के तीस अंश होते हैं तथा एक नवांश 3° अंश व 20′ कला के बराबर होता है। 3°.20′ तक पहला नवांश, 6°.40′ तक दूसरा, इसी तरह 10°.00, 13°.20′,16°.40′ 20°.00, 23°.20′

26.°40′ व 30°.00 अंशों तक क्रमशः तीसरा, चौथा, पांचवां आदि नवांश हो जाता है। अब किस राशि का कौन-सा नवांश किस ग्रह का है, यह जानने के लिए आगे एक चक्र दे रहे हैं, इसकी सहायता से मिनटों में ही नवांश कुण्डली बनायी जा सकती है।

नवांश चक्र

नवांश	मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चि.	धनु	मकर	कुम्भ	मीन
3°.20′	1	10	7	4	1	10	7	4	1	10	7	4
6°.40′	2	11	8	5	2	11	8	5	2	11	8	5
10°.00′	3	12	9	6	3	12	9	6	3	12	9	6
13°.20′	4	1	10	7	4	1	10	7	4	1	10	7
16°.40′	5	2	11	8	5	2	11	8	5	2	11	8
20°.00′	6	3	12	9	6	3	12	9	6	3	12	9
23°.20′	7	4	1	10	7	4	1	10	7	4	1	10
26°.40′	8	5	2	11	8	5	2	11	8	5	2	11
30°.00′	9	6	3	12	9	6	3	12	9	6	3	12

नोट—राशियों के नीचे दिए गए अंक राशियों के सूचक हैं। उदाहरणार्थ—तुला का सातवाँ

अव अपने पिछले उदाहरणों की नवांश कुण्डलियां वनाते हैं—पाठ 3 में वताए गए उदाहरण सं० 2 का लग्न स्पष्ट 00·12·24 हैं तथा वहीं पर सारे ग्रहों के स्पष्ट रेखांश निकाल रखे हैं। वस, अव हमें कोई गणित क्रिया नहीं करनी है, अपितु यह देखना है कि लग्न मेष के 12 अंश कौन-से नवांश में पड़ते हैं तथा उसकी राशि कौन-सी है ? इसके लिए पीछे दिए गए नवांश चक्र में देखा तो मेष राशि के नीचे 13°20′ अंशों के सामने कर्क (4) राशि है। यही हमारे उदाहरण की नवांश कुण्डली की राशि है। इसे ही लग्न मानकर कुण्डली वना लेंगे। इसी तरह ग्रहों के भी स्पष्ट रेखांशों के अंशों व कलाओं के आधार पर चक्र से राशि ज्ञात कर उसी राशि में सम्वन्धित ग्रह को रख देंगे। देखिए—

नवांश कुण्डली
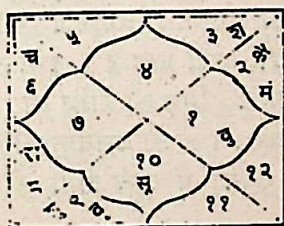
सूर्य मीन राशि के 21° पर है, अतः मीन के सातवें नवांश मकर में उसे लिखा गया। चन्द्र धनु राशि के 17° में है, अतः कन्या राशि में, मंगल वृष में, बुध मेष में, गुरु धनु में, शुक्र धनु में, शनि मिथुन में, राहु वृश्चिक में तथा केतु वृष में रखा गया है।

षड्वर्ग की कुण्डलियों में प्रायः राहु व केतु को नहीं रखते,

किन्तु नवांश कुण्डली में राहु केतु को भी स्थापित किया जाता है।

इसी तरह से पंचांग द्वारा पाठ 5 में दिए गए उदाहरण की नवांश कुण्डली इस प्रकार बनेगी—
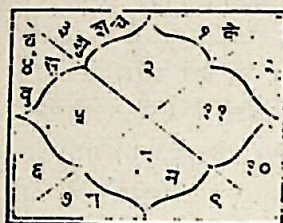
यदि लग्न व नवांश लग्न की राशि एक ही हो तो वर्गोत्तम नवांश होता है। इसी तरह जन्मलग्न में जो ग्रह जिस राशि में हो, वह नवांश में भी यदि उसी राशि में हो तो उसे भी वर्गोत्तम नवांश में माना जाएगा। वर्गोत्तम राशि या ग्रह बहुत बलवान् व फलदायक माना गया है। इसी तरह जो ग्रह जन्म कुण्डली में अपनी राशि, मित्र की राशि या उच्च राशि में हो तथा नवांश में भी वैसे ही हो तो बलवान् हो जाते हैं। कुण्डली में निर्बल ग्रह यदि नवांश में बली होगा तो अवश्य फलदायक होगा।

(7)

जन्म पत्र लिखने की विधि

पिछले पाठों में हमने आवश्यक कुण्डलियां बनाना, ग्रह स्पष्ट एवं भाव स्पष्ट करना सीख लिया है। कुण्डली बना लेने से यद्यपि हमारी व्यावहारिक आवश्यकताएं तो पूरी हो जाएंगी लेकिन उन्हें सुरक्षित रखना तथा क्रमबद्ध ढंग से प्रस्तुत करना सम्भव नहीं हो पाएगा। इसके लिए जन्म पत्र लिखने का ज्ञान आवश्यक है। जन्म पत्र लिखना जन्म पत्र रचना का एक महत्त्व-पूर्ण अंग है। प्रत्येक आकार की जन्मपत्री लिखने के लिए भी आजकल बाजार में छपे छपाए कागज तथा कापियां मिलती हैं। सम्भव है कि उनमें कुछ चीजें हमारी जानकारी से अधिक हों तथा कुछ आवश्यक चक्र नहीं दिए गए हों, इससे हमें परेशान नहीं होना चाहिए। अच्छा तो यही है कि मध्यम आकार की कोई कापी, जिसमें षड्वर्गादि नहीं दिए गए हों, आप ले लें। उसमें यदि कोई अतिरिक्त कुण्डली आप देना चाहते हैं तो प्रायः एक दो पृष्ठ खाली होते हैं। एतदर्थ उनका उपयोग किया जा सकता है। नामाक्षर कापी या फार्म में केवल जन्म लग्न कुण्डली व चन्द्रकुण्डली के लिए ही आवश्यक स्थान दिया गया होता है। अतः वे हमारी जरूरत के मुताबिक नहीं होतीं। कुछ लोग स्वयं किसी सुन्दर डायरी में आवश्यकतानुसार चक्र आदि बना कर जन्म पत्री लिख लेते हैं। स्वयं लिखने से समय तो अवश्य

अधिक लगता है लेकिन शुद्धता की रक्षा हो जाती है। उदाहरणार्थ हम पिछले उदाहरणों की जन्म-पत्री लिखने का ढंग आगे दे रहे हैं। ऊपर बताए गए फार्म आदि भारतीय पद्धति से संस्कृत भाषा में जन्म पत्री लिखने के नमूने पर छपे होते हैं। पण्डित लोग संस्कृत भाषा में ही जन्म पत्री लिखते हैं, लेकिन आप हिन्दी अंग्रेजी आदि किसी भी भाषा में जन्म पत्री लिख लें, उससे कोई फ़र्क नहीं पड़ता। साइडरियल टाइम के आधार पर बनाई गई जन्म पत्री भी यथेच्छ भाषा में लिख सकते हैं।

पारम्परिक जन्म-पत्र लेखन

उदाहरण सं. 1 (पाठ 5)

॥ श्रीः ॥

स जयति सिन्धुरवदनो देवो यत्पादपङ्कजस्मरणम्।
वासरमणिरिव तमसां राशीन्नाशयति विघ्नानाम्॥ 1॥
आदित्याद्याः ग्रहाः सर्वे सनक्षत्राः सराशयः।
दीर्घमायुः प्रयच्छन्तु यस्यैषा जन्म - पत्रिका॥ 2॥

अथ शुभे विक्रम संवत्सरे 2042, शाके 1907, उत्तरायणे उत्तरगोले, ग्रीष्म ऋतौ शुभे आषाढ़ मासे कृष्ण पक्षे शुभतिथौ पंचम्यां शुक्रवासरे घट्यादयः 45।57 श्रवणनक्षत्रे घ० 46।15 ऐन्द्रयोगे घ० 24।03 कौलवकरणे घ० 12।09. दिनमानम् घ० 34।20 रात्रिमानम् घ० 25।40 अहोरात्रमानम् घ० 60।00 वृषार्कस्य गतांशाः 22, शेषांशाः 7 तत्र श्रीसूर्योदयादिष्टम् घ० 21।32।30 (दोपहर बाद 2 बजकर 5 मिनट भा. स्टे. टा.) सूर्योदयकालः दिल्लीनगरे 5।28 बजे भा. स्टे. टा. सूर्यास्तकालः 7।12 बजे भा. स्टे. टा. तत्समये कन्यालग्नस्य स्पष्टोदये, दिल्लीनगरे श्रीमतः (बाबा का नाम) पुत्रः तस्य पुत्रस्य श्रीमतः (पिता

का नाम)—गृहे भार्यायाः दक्षिणकुक्षौ पुत्रः (वामकुक्षौ पुत्री) अजायत् ।

तत्र होराचक्रानुसारेण भयातम् घ० 35।37।30, भभोगः घ० 60।20।00 वशात् श्रवण भे तृतीये चरणे जनितत्वात् 'ख' काराद्यक्षरं नाम । तस्य राशिः मकरः राशीशः शनिः वर्णः वैश्यः वश्यः जलचरः, गणः देवः, योनिः वानरः, नाडी अन्त्या, वर्गः मार्जारः इति गुणाः विवाहादौ व्यवहारादौ च विचारणीयाः । शुभं भवतु ।

दिनांकः जन्म तिथिः 7 जून, 1985 ई० दिल्लीनगरे समयः मध्याह्नोत्तर 2.5 वादने इति ।
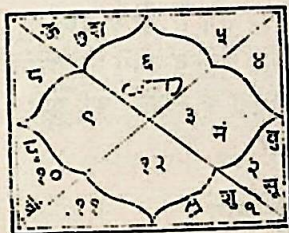
जन्म-कुण्डली

लग्न स्पष्ट
०५
१६
००
००

चन्द्र-कुण्डली
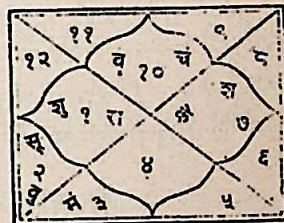
ग्रहाः स्पष्टाः ॥

	सूर्यः	चन्द्रः	मंगलः	बुधः	गुरुः	शुक्रः	शनिः	राहुः
राशिः	०१	०९	०२	०१	०९	००	०६	००
अंशाः	२२	१७	०४	२२	२३	०७	२९	२३
कलाः	५३	५२	५७	३५	१८	१४	३३	०९
विकलाः	२७	१६	१०	२७	१४	२९	३९	५०

इसके पश्चात् भाव स्पष्ट, चलित चक्र, नवांश चक्र व दशा अन्तर्दशा आदि लिख लेनी चाहिए । जन्म-पत्री की समाप्ति पर

भी आरम्भ की तरह मांगलिक श्लोक व आशीर्वादात्मक वाक्य लिखे जाते हैं—

धर्मेण हन्यते व्याधिः, धर्मेण हन्यते ग्रहः ।
धर्मेण हन्यते शत्रुः, यतो धर्मस्ततो जयः ॥

॥ शुभं भवतु ॥

जन्म पत्री लिखने का उपर्युक्त ढंग परम्परा से चला आ रहा है तथा औपचारिक है । आजकल जो लोग पेशेवर ज्योतिषी नहीं हैं, वे हिन्दी या अंग्रेजी में समस्त जानकारी लिखकर गणितागत कुण्डलियां लिख लिया करते हैं । आगे हिन्दी भाषा में जन्म-पत्र लेखन का सरल ढंग बताया जा रहा है । प्रारम्भिक जिज्ञासुओं को उसी ढंग को अपनाना चाहिए । बाद में गणित का अच्छा अभ्यास हो जाने पर पारम्परिक ढंग से भी वे यथेच्छ जन्म-पत्र लेखन का अभ्यास कर सकते हैं । लेकिन सभी जिज्ञासु संस्कृत वेत्ता नहीं होंगे । अतः अशुद्ध संस्कृत के स्थान पर शुद्ध हिन्दी में लिखना अधिक प्रीतिकर होगा ।

हिन्दी में जन्म-पत्र लिखना

(पाठ 2 उदाहरण सं. 2)

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

ईस्वी सन् 1983 में अप्रैल मास की पांचवी तिथि तदनुसार मंगलवार को प्रातः 7.15 A.M बजे दिल्ली में श्रीमान् (पिता का नाम) महोदय के यहां पुत्र/पुत्री उत्पन्न हुआ/हुई । अभीष्ट दिन स्थानीय मध्यम काल 6 बजकर 53 मिनट 52 से. एवं जन्म समय का साम्पातिक काल (Sidereal time) 16 घंटे. 45 मि. 5 से. हैं । जन्म स्थान दिल्ली के 28°.39′ अक्षांश (उत्तर) को लग्न सारणी के अनुसार जन्म समय के स्पष्ट लग्न मेष के

12° व 24′ व्यतीत हुई थी। चन्द्रमा का जन्मकालीन स्पष्ट रेखांश 8 . 17° . 07′ . 06″ है, तदनुसार जन्म नक्षत्र पूर्वाषाढ़ दूसरा चरण है। अतः जन्म नाम का आदि अक्षर 'ध' होगा। जन्मतिथि के अनुसार राशि—मेष है।

जन्म कुण्डली
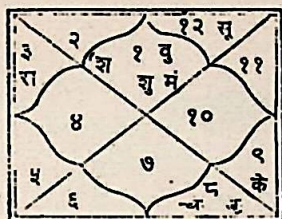
नव श कुण्डली
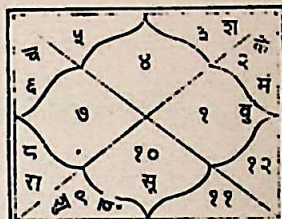
इसके पश्चात क्रमशः ग्रह स्पष्ट, भाव स्पष्ट, चलित चक्र भाव मध्य चक्र एवं दशा अन्तर्दशा आदि लिख लेनी चाहिए।

यदि जिज्ञासु इस जन्म पत्र में भी योनि, वर्ग, गण आदि लिखना चाहें तो जन्म नक्षत्र के चरण के अनुसार ही लिखें। भारतीय समाज में जन्म-पत्र वनाने का उद्देश्य केवल भविष्य जानना ही नहीं है, अपितु अनेक सामाजिक धार्मिक क्रियाओं में भी इसका उपयोग होता है। अतः योनि, वर्ग आदि लिख लेने से इसकी उपयोगिता निःसन्देह वढ़ जाएगी।

(8)

दशा-अन्तर्दशा निकालना

दशा व उसके प्रकार

जन्मकुण्डली में स्थित ग्रह अपने बल के अनुसार जातक के व्यक्तितत्व व भाग्य का निर्माण करते हैं। यह मनुष्य जीवन अनेक घटनाओं का पुलिन्दा है। साधारणत: जीवन में कौन-सी घटना किस समय होगी ? अथवा कुण्डली में स्थित ग्रह अपना विशेष प्रभाव जीवन में किस समय दिखाएगा ? इसके लिए भारतीय आचार्यों ने दशा पद्धति को अपनाया। दशा शब्द का प्रचलन व्यवहार में संक्षेप के कारण होता है, अन्यथा पूरा नाम 'महादशा' है। मनुष्य जीवन की आदर्श व मानक (Standard) अवधि में सारे ग्रहों का समय निर्धारित किया गया है। यह समय ही महादशा अथवा दशाकाल कहलाता है। प्रत्येक ग्रह की दशा में भी और सभी ग्रहों को कुछ समय दिया गया है। यह समय अन्तर्दशा (Sub Period) कहलाता है। अन्तर अर्थात् भीतरी दशा अर्थात् महादशा के काल में ही सभी ग्रहों की दशा होना। ये दशाएं आचार्यों ने कई प्रकार की मानी हैं, जिनसे स्थूल-से-स्थूल तथा सूक्ष्म-से-सूक्ष्म काल का भी फल जाना जा सकता है। आशय यह है कि दशाओं का विस्तार सूक्ष्म से सूक्ष्मतर अर्थात् बारीकी से भरा होता जाता है। कुछ प्रचलित दशाओं के नाम

इस प्रकार हैं—विंशोत्तरी दशा, अष्टोत्तरी दशा, योगिनी दशा।

मनुष्य की अधिकतम आयु 120 वर्ष मानकर आचार्यों ने ग्रहों की दशा की अवधि निर्धारित की है। इसमें सारे ग्रहों के दशाकाल का योग 120 वर्ष होता है। इसलिए इसे विंशोत्तरी दशा कहते हैं। इसका शाब्दिक अर्थ है—बीस वर्ष ऊपर वाली। अर्थात् 20 अधिक 100 वाली दशा।

यदि मनुष्य की अधिकतम आयु 108 वर्ष मानकर चला जाए तो सारा दशा विभाग इन्हीं वर्षों में समाप्त हो जाता है। इस कारण इस दशा विभाग को 'अष्टोत्तरी दशा' कहा जाता है।

योगिनी दशा की सारी अवधि 36 वर्ष है, अतः विद्वानों का मत है कि यह दशा केवल आयु के 36 वर्षों तक ही प्रभावी होती है। इसके विपरीत कुछ विद्वान 36 वर्षों के बाद इसकी पुनरावृत्ति मानते हैं।

ऊपर बताई गई तीनों दशाओं में से विंशोत्तरी को आचार्यों ने अधिक प्रामाणिक व प्रभावकारी माना है। आयु का निर्णय करने में तथा मृत्यु की दशा जानने में भी इसी का उपयोग किया जाता है। अनुभव से भी इस दशा की प्रमाणिकता सिद्ध होती है।

अष्टोत्तरी दशा का प्रचलन विशेष रूप से दक्षिण भारत में है। वहां के ज्योतिषी इसी दशा पद्धति से फल प्राप्ति का समय निर्धारित किया करते हैं। लेकिन एक अन्य मत भी है कि शुक्ल पक्ष में यदि जन्म हुआ हो तो 'अष्टोत्तरी दशा' से फल देखना चाहिए तथा कृष्ण पक्ष में जन्मे लोगों के लिए 'विंशोत्तरी दशा' प्रयोग में लानी चाहिए।

इन सब मत-मतान्तरों के होते हुए भी जातक वेत्ताओं ने विंशोत्तरी दशा पद्धति को ही प्रधान माना है। आजकल भी इसी का विशेष प्रचलन है, अतः जिज्ञासुओं को इस पद्धति को अच्छी

तरह से समझ लेना चाहिए।

विशोत्तरी दशा जानना

विशोत्तरी दशा कैसे जानें? जन्म के समय चन्द्रमा जिस नक्षत्र पर होता है, उसी के अनुसार विशोत्तरी दशा जानी जाती है। पहले वताया जा चुका है कि जन्म नक्षत्र व चन्द्रमा का नक्षत्र एक ही होता है, अथवा यों कहें कि पंचांग में दिए गए दैनिक नक्षत्र वास्तव में चन्द्रमा के खचक्र में भ्रमण की स्थिति के द्योतक होते हैं, तथा उन्हें ही संक्षेप में नक्षत्र कहा जाता है। यदि किसी दिन कृत्तिका नक्षत्र वर्तमान है तो समझना चाहिए कि उस समय चन्द्रमा कृत्तिका में भ्रमण कर रहा है। जन्म नक्षत्र चन्द्र नक्षत्र होने के कारण ही जन्म राशि व चन्द्रमा की राशि भी समान होती है। यही जन्म नक्षत्र विशोत्तरी दशा जानने का साधन है। जन्म के समय कौन-सी दशा चल रही थी, यह जानने के लिए कृत्तिका नक्षत्र से आरम्भ कर जन्म नक्षत्र तक गिन लेना चाहिए। इस संख्या में नौ का भाग देने से जो शेष वचे वही दशा वर्तमान होगी।

ध्यान दीजिए, दशा के प्रसंग में ग्रहों का क्रम सामान्य से अलग होता है। अर्थात् सोम, मंगल, बुध, गुरु आदि क्रम से दशा नहीं होती, अपितु उन्हें एक विशेष क्रम दिया गया है। क्रमशः सूर्य, चन्द्रमा, मंगल, राहु, गुरु, शनि, बुध, केतु शुक्र की दशाएं होती हैं। इस क्रम को याद रखने के लिए ज्योतिषी लोगों में यह सूत्र प्रचलित है—

'आ० च० भौ० रा० जी० श० बु० के० शु०'

आ०—आदित्य (सूर्य), च—चन्द्र, भौ—भौम (मंगल), रा० - राहु, जी०—जीव (गुरु), श०—शनि, बु०—बुध० के०—केतु तथा शु०—शुक्र।

दशा में ग्रहों का भिन्न क्रम क्यों है ?—इसके लिए नक्षत्रों के स्वामी ग्रहों को आधार माना जाता है। कृत्तिका नक्षत्र से आगे के नौ-नौ नक्षत्रों के स्वामी क्रमशः सूर्य, चन्द्र, मंगल, राहु, गुरु, शनि, बुध, केतु व शुक्र हैं। कृत्तिका से नौवां नक्षत्र पूर्वा फाल्गुनी है, अतः पू० फा० नक्षत्र का स्वामी शुक्र हुआ। आगे उ० फाल्गुनी से पूर्वाषाढ़ तक तथा उत्तराषाढ़ से भरणी तक पुनः उपर्युक्त क्रम से ही ग्रहों को स्वामी माना गया है। अतः सरल शब्दों में कहा जा सकता है कि महादशा का स्वामी वही ग्रह होता है जो वास्तव में जन्म नक्षत्र का स्वामी है।

दशाओं की अवधि

इन दशाओं की अवधि अलग-अलग है—

सूर्य—6 वर्ष, चन्द्र—10 वर्ष, मंगल—7 वर्ष, राहु—18 वर्ष, गुरु—16 वर्ष, शनि—19 वर्ष, बुध—17 वर्ष, केतु—7 वर्ष तथा शुक्र—20 वर्ष।

उदाहरण—पाठ 2 के उदाहरण सं० 2 में जन्म नक्षत्र पूर्वाषाढ़ है। कृत्तिका से गिनने पर 18वां नक्षत्र है। इसे 9 से भाग देने पर शून्य बचा। अतः अन्तिम दशा (शुक्र) वर्तमान है।

पाठ 5 के उदाहरण का जन्म नक्षत्र श्रवण है। कृत्तिका से श्रवण तक की 20 संख्या को 9 से भाग देने पर 2 शेष बचे। अतः दूसरी दशा (चन्द्र) वर्तमान हुई।

वास्तव में सारे नक्षत्र के लिए एक दशा होती है। नक्षत्र के बीते हुए समय के आधार पर दशा के बीते हुए वर्ष, मास, दिन आदि जाने जाते हैं। बीत चुकी दशा को 'भुक्त दशा' कहते हैं। दशा के वर्षों में से 'भुक्त दशा' घटाने से शेष दशा बचती है। इस शेष दशा को 'भोग्य दशा' कहते हैं।

दशा के बीते हुए व आने वाले वर्षों का ज्ञान किस तरह

हो ? इसके लिए भयात (नक्षत्र की वीती घड़ियां) व भभोग (नक्षत्र की कुल घड़ियां) को पलात्मक वना लेना चाहिए। फिर पलात्मक भयात को जन्मदशा के वर्षों से गुणा कर भभोग का भागदें। जो लब्धि होगी, वे वीते हुए वर्ष हैं। अव शेष को 12 से गुना कर फिर पलात्मक भभोग का भाग देने से लब्धि दिन होंगे। शेष को 60 से गुणा कर भभोग का भाग देने से लब्धि बीती हुई घड़ियां होंगी। अव यदि शेष है तो उसे 60 से गुणा कर पुनः भभोग का भाग देने से लब्धि पल होगी। अव इन वर्ष, मास, दिन, घड़ी व पलों को इकट्ठा लिखकर दशा के वर्षों में से घटा देने पर शेष दशा (भोग्य दशा) होगी।

यह पद्धति पंचांग से जन्मपत्री वनाते समय प्रयोग में आती है। एफेमेरीज से गणित करने में नक्षत्र की वीती घड़ियां (भयात) तथा कुल घड़ियां (भभोग) निकालने की आवश्यकता नहीं पड़ती, अतः ऐसी स्थिति में चन्द्रमा के स्पष्ट रेखांश से दशा का भुक्त व भोग्य मान निकाला जाता है। इन दोनों पद्धतियों को अपने पिछले उदाहरणों के सन्दर्भ में समझेंगे।

चन्द्र स्पष्ट से दशा के भुक्त भोग्य वर्ष निकालना

(पाठ 2, उदा० सं० 2) शुक्र की महादशा जन्म समय वर्तमान थी। भुक्त व भोग्य वर्ष निकालेंगे। चन्द्रमा का स्पष्ट रेखांश है—8।17।7।06। श्रीकृष्ण ऐफेमेरीज में निरयण चन्द्र द्वारा विशोत्तरी दशा का भोग्य जानने के लिए सारिणी दी गई है। ऐसी सारिणी प्रतिवर्ष दी जाती है। उसमें अपना चन्द्र स्पष्ट मिलाया तो धनु राशि के 17 अंशों के नीचे दशा के शेष वर्ष दिए गए हैं—14 वर्ष 6 मास।

सारिणी के अन्त में आनुपातिक चन्द्रकला सारिणी (Proportional Parts For DASA) दी गई है। चन्द्र

स्पष्ट की शेष कलाओं (7) के सामने शुक्र की महादशा के नीचे दशा शेष 2 मास 3 दिन दिया है। इसे पूर्व प्राप्त दशा शेष में घटाया—

	वर्ष	मास	दिन	
	14	6	00	
	—	2	3	
दशा के शेष वर्ष मास हुए	14	3	27	(भोग्य वर्ष)

इन भोग्य वर्षों को दशा के कुल वर्षों (20) से घटाया—

	20	00	00	
	14	3	27	
बीते हुए वर्ष आए	5	8	3	(भुक्त वर्ष)

इस तरह जन्म के समय शुक्र की महादशा के 5 वर्ष 8 मास 3 दिन बीत चुके थे।

भयात व भभोग से दशा स्पष्ट करना

(उदा० सं० 1, पाठ 5) जन्मनक्षत्र श्रवण, भयात 35।37।30 भभोग 60।20।00। चन्द्रदशा में जन्म हुआ है। दशा वर्ष—10

पलात्मक भयात—35।37 × 60 = 2137

पलात्मक भभोग—60।20 × 60 = 3620

पलात्मक भयात—2137 × 10 = 21370 ÷ 3620 = लब्धि 5 वर्ष

शेष 3270 को 12 से गुणा किया—3270 × 12 = 39540 ÷ 3620 तो लब्धि 10 (मास) हुई।

शेष 3040 को 30 से गुणा किया—3040 × 30 = 91200 ÷ 3620 = लब्धि 25 (दिन) है। अतः जन्म समय 5 वर्ष 10 मास 25 दिन दशा बीत चुकी थी। इसे पूरे दशामान में से घटाया—

10।00।00।00

5।10।25।00 घटाया

4। 1। 5।00 भोग्य दशा वर्ष हैं।

भोग्य दशा निकालने के बाद विंशोत्तरी दशा चक्र लिख लेना चाहिए। इससे ग्रहों की दशा की आरम्भ व समाप्ति की तिथि जानी जा सकेगी।

विंशोत्तरी दशा चक्र

	दशा	चन्द्र	मंगल	राहु	जीव
	वर्ष	4	7	18	16
	मास	1	0	0	0
	दिन	5	0	0	0
जन्म सन्	1985	1989	1996	2014	2030
जन्म मास	6	7	7	7	7
जन्म तिथि	7	12	12	12	12

	दशा	शनि	बुध	केतु	शुक्र	सूर्य
	वर्ष	19	17	7	20	6
	मास	0	0	0	0	0
	दिन	0	0	0	0	0
जन्म सन्	2049	2066	2073	2093	2099	
जन्म मास	7	7	7	7	7	
जन्म तिथि	12	12	12	12	12	

चक्र बनाते समय जन्मतिथि में दशा के दिन, मास में मास तथा जन्म वर्ष में दशा के वर्ष जोड़ते हैं। 30 से अधिक होने पर दिनों में से 30 घटा लेते हैं तथा उनके बदले 1 मास आगे जोड़ देते हैं। इसी तरह मासों को भी अधिक होने की स्थिति में 12 घटाकर प्रयुक्त करते हैं।

प्राचीन पद्धति में जन्म तिथि के स्थान पर सूर्य की राशि व अंश एवं जन्म संवत् लिखकर दशा की समाप्ति निकाली जाती है। उसकी एक विशेषता है कि सौर मास की एक जैसी अवधि के कारण दशा का आरम्भिक व समाप्ति काल अधिक सही जाना जा सकता है। कारण यह है कि सूर्य के जितने अंश किसी तिथि को बीते हों, अगले वर्ष भी उसी तिथि को उतने ही अंश बीतेंगे। उदाहरणार्थ मेष में सूर्य का संक्रमण प्रतिवर्ष 13 अप्रैल को होता हुआ आप देखेंगे। इसके विपरीत अंग्रेजी महीने कम ज्यादा दिनों के होने के कारण सही तिथि में 1-2 दिनों का अन्तर होगा। यद्यपि जन्मतिथि का प्रयोग आसान है, लेकिन हमारी सलाह है कि जिज्ञासुओं को शुद्धता की दृष्टि से सूर्य के अंशादि को ही प्रयुक्त करना चाहिए।

अन्तर्दशा जानने का प्रकार

पहले बता चुके हैं कि प्रत्येक ग्रह की महादशा में सभी ग्रहों की अन्तर्दशाएं होती हैं। जिस ग्रह की महादशा होगी, उस दशा में सबसे पहली अन्तर्दशा उसी ग्रह की होगी। बाद में अन्तर्दशाओं का क्रम महादशाओं के पहले बताए गए क्रमानुसार ही होगा। दशा में किस ग्रह की अन्तर्दशा कितने समय की होगी? इसके लिए जिस ग्रह की अन्तर्दशा निकालनी है तथा जिसमें निकालनी है, दोनों ग्रहों की महादशा के वर्षों को आपस में गुणा कर लेना चाहिए। जो गुणनफल आए उसके आखिरी अंक (दायीं तरफ

वाला आखिरी) को अलग करके तीन गुना कर लेना चाहिए। ये ही अन्तर्दशा के दिन होंगे। अन्तिम अंक को छोड़कर जो संख्या बचे वही मास होंगे। उदाहरण के लिए सूर्य में सूर्य की अन्तर्द- जाननी है तो दशा वर्षों को गुणा किया—6×6=36। आ अंक 6 को 3 से गुणा किया तो 18 दिन हुए। शेप अंक अर्थात् 3 मास हुए। आशय यह है कि सूर्य की अन्तर्दशा 3 मास 18 दिन रहेगी।

इस तरीके का जिज्ञासुओं को अच्छी तरह अभ्यास कर लेना चाहिए। यदि गणित से वचना चाहें तो ऐफेमेरीज के अन्त में सभी ग्रहों की अन्तर्दशा के चक्र दिए गए हैं। वहां से सारे ग्रहों की अन्तर्दशा का मान सरलता से जाना जा सकता है।

जिस महादशा की अन्तर्दशा जाननी हो, उसका अन्तर्दशा चक्र लिख लेना चाहिए। विंशोत्तरी महादशा चक्र की तरह ही ग्रहों के नीचे उनकी अन्तर्दशा के वर्ष आदि लिखकर तिथि या सूर्य के अंश (पिछली महादशा की समाप्ति की तिथि या अंश) जोड़ते चलने से सभी अन्तर्दशाओं की आरम्भ व समाप्ति की तिथि जानी जा सकेगी।

अन्तर्दशाओं का उपर्युक्त चक्र जन्म समय वर्तमान महादशा पर इसी ढंग से लागू नहीं होगा। कारण यह है कि जन्म दशा का जो भाग जन्म से पहले ही वीत चुका है, उसके अन्दर पड़ने वाली अन्तर्दशाओं को उस चक्र में नहीं दिखाया जाएगा।

कितनी अन्तर्दशाएं बीत चुकी हैं, यह जानने के लिए जन्म समय वर्तमान दशा के भुक्त वर्षों को एक जगह लिख लो। अब उस दशा की अन्तर्दशाओं के वर्षों को शुरू से तव तक जोड़ो जब तक कुल योग भुक्त दशा वर्षों से थोड़ा अधिक न हो जाए। तब जिस ग्रह की अन्तर्दशा में वे भुक्त वर्ष समा गए हों, वही अन्तर्दशा जन्म के समय वर्तमान होगी। पिछले उदाहरण में

चन्द्रमा की दशा में जन्म हुआ है। चन्द्रमा की भुक्त दशा है—5 वर्ष 10 मास 25 दिन। अब चन्द्रमा की अन्तर्दशाओं को जोड़ा—

		वर्ष	मास	दिन			
चन्द्र अन्तर्दशा—		00	10	00			
मंगल	"	00	07	00			
राहु	"	01	06	00			
गुरु	"	01	04	00			
शनि	"	+ 01	07	00=			
				वर्ष	मास	दिन	
				5	10	00	
बुध	"	+ 01	05	00			
		जोड़ा 07	03	00			

चन्द्रमा में शनि की अन्तर्दशा तक 5 वर्ष 10 मास हुए हैं। हमारी भुक्त दशा 5 वर्ष 10 मास 25 दिन है। आशय यह है कि जन्म समय बुध की अन्तर्दशा वर्तमान थी।

अन्तर्दशा के भी गत व शेष वर्षादि जानने के लिए ऊपर के योग में से भुक्त वर्ष घटा देंगे—

	07	03	00	
भुक्त दशा	5	10	25	घटायी
	1	04	05	बुध की अन्तर्दशा शेष है।

इस तरह दशाओं व अन्दंशाओं को स्पष्ट रूप से निकाल लेना चाहिए। इन्हीं दशाओं के आधार पर मनुष्य जीवन की सामयिक स्थिति जानी जा सकती है। जो लोग और अधिक सूक्ष्मता का आग्रह रखते हों, वे प्रत्यन्तर दशा को भी निकाल सकते हैं। महादशा की एक अन्तर्दशा में सभी ग्रहों की प्रत्यन्तर

दशा भी मानी गई है। लिखने का प्रकार अन्तर्दशा की तरह ही होता है। प्रत्यन्तर दशा के लिए आवश्यक सारिणी यूनिवर्सल एफेमेरीज में दी गई है तथा अन्य पुस्तकों या पंचांगों में भी प्रायः दी होती है। यों, प्रत्यन्तर दशा भी इसी तरह 9 भागों में बंटती है तथा उसमें भी सभी ग्रहों की सूक्ष्म दशा या प्राणदशा स्पष्ट की जाती है। प्रत्येक दिन की दशा निकालने के विषय में भी ज्योतिष के ग्रन्थों में बताया गया है। इस तरह सूक्ष्म से सूक्ष्मतर होती हुई ये दशाएं मनुष्य के जीवन के छोटे-छोटे काल खण्डों का भी फलादेश करने में समर्थ हैं। लेकिन अधिक सूक्ष्मता के फेर में पड़कर अधिक गणित क्रिया करना जाल है। उस जाल में फंसकर निश्चय ही फल कहने की शक्ति कम हो जाती है। कहावत है कि अधिक गणित के बोझ से फलित दब जाता है। कभी भीं बिल्कुल गणितीय विवेचन नहीं करना चाहिए। फलित शास्त्र सम्पूर्ण रूप से व्यावहारिक है। उदाहरणार्थं हमारा व्यवहार जब घण्टा मिनटों में समय जानने से चल जाता है। तो फिर सेकेण्डों तक की अधिक सूक्ष्मता का आग्रह किसी बड़े प्रयोजन का साधक नहीं हो सकता। उदाहरण के लिए गाड़ी 8 बजकर 15 मिनट पर चलेगी, कहना अधिक व्यावहारिक है, जबकि 8 बजकर 15 मिनट 35 सेकेण्ड पर चलेगी ऐसा कहना सैद्धान्तिक अधिक है। कहने का तात्पर्य यह है कि दशा-अन्तर्दशा तक ही यदि अभ्यास किया जाये तो सुविधा व व्यवहार दोनों की रक्षा हो सकेगी।

(9)

कुण्डली विचार

जन्म कुण्डली बना लेने के बाद यदि आप उससे कुछ संक्षिप्त विचार कर सकेंगे तो यह प्रसन्नतादायक व उत्साहवर्धक स्थिति होगी। बड़े परिश्रम से कुण्डली बनाई तथा कुछ जान नहीं पाए तो फिर क्या लाभ ? इसीलिए इस प्रकरण में हम कुण्डली विचार की खास बातों पर प्रकाश डालेंगे। यद्यपि कुण्डली विचार करना अध्ययन व अभ्यास पर निर्भर करता है, लेकिन प्रारम्भिक जिज्ञासु भी कुछ विशेष बातों का, जिन्हें आमतौर पर लोग जानना चाहते हैं, स्वयं विचार कर सकते हैं। धीरे-धीरे अध्ययन व अभ्यास की मात्रा बढ़ते-बढ़ते भविष्य की घटनाओं का स्वरूप व प्रकृति का निर्धारण करने की क्षमता भी बढ़ेगी। उस स्थिति में फलित के विशिष्ट ग्रन्थों का अध्ययन काफी लाभदायक होगा। जैसे—सर्वार्थ चिन्तामणि, जातकादेश मार्ग, फलितमार्तण्ड तथा पाराशरीय होरा शास्त्र आदि ग्रन्थ ज्योतिष की फलित शाखा के विशिष्ट प्रकाश स्तम्भ हैं। लेकिन प्रारम्भिक स्तर पर उपयोगी सामग्री व निर्देश हम उक्त सभी ग्रन्थों व अन्य स्रोतों के आधार पर विचार व अनुभव की कसौटी पर परखकर आपके समक्ष रख रहे हैं। इनके अध्ययन से कुण्डली विचार के समुद्र में पाठकों का आनन्द से अवगाहन हो सकेगा। कुण्डली के 12 भावों या स्थानों से अलग-अलग चीजों का

विचार किया जाता है। इसी तरह सभी ग्रह मनुष्य जीवन के अलग-अलग अंगों पर अपना प्रतिनिधित्व रखते हैं। ग्रहों से कौन-सी वातों का विचार करना चाहिए यह हम विषय प्रवेश के अन्तर्गत वता चुके हैं।

1. **कौन से भाव से क्या विचार करना चाहिए ?**—इसके लिए ध्यान रखिये कि स्थानों की गणना उत्तर भारतीय कुण्डली में दाएं से वाएं को आगे वढ़ती है, अर्थात् घड़ी की चाल के विपरीत क्रम से पहला, दूसरा, तीसरा आदि भाव माने जाते हैं।

पहले स्थान से शरीर, रूप, वल, स्वभाव, सुख, दुःख, मस्तिष्क आदि का विचार किया जाता है।

दूसरे स्थान से धन, आंख, परिवार, वाणी, सुन्दरता, प्रेम, मृत्यु, इकट्ठा किया गया धन तथा क्रय विक्रय का विचार करना चाहिए।

तीसरे स्थान से छोटे भाई-बहन, नौकर, पराक्रम, हिम्मत, आयु, फेफड़ों के रोग तथा संगीत आदि का विचार होता है।

चौथा स्थान—माता, सम्पत्ति, घर, वाहन, भवन, सुख, लोकप्रियता, पेट के रोग, मित्र तथा छल कपट आदि।

पांचवां स्थान—विद्या, वुद्धि, प्रवन्ध शक्ति, विनय, नौकरी छूटना, सन्तान, गर्भपात, अचानक मिलने वाली धन सम्पत्ति, गुर्दे, मूत्राशय आदि।

छठा स्थान—मामा, रोग, शत्रु, गुदा, घाव, जमींदारी, चिन्ता तथा ऋण आदि।

सातवां स्थान—स्त्री, काम-सुख, दैनिक रोजगार, मृत्यु, मूत्रेन्द्रिय, गुप्त रोग, विवाह आदि।

आठवां स्थान—आयु, जीवन, वैराग्य, मृत्यु का कारण,

समुद्र यात्रा, चिन्ता, अण्डकोष क्षेत्र, कर्ज का उतरना, संकट आदि।

नवां स्थान—भाग्योदय, विद्या, त्याग, पितृ सुख, तीर्थ यात्रा, साला, गुरू आदि।

दसवां स्थान—नौकरी (सरकारी), पद, प्रतिष्ठा, आकाश विचरण, व्यापार, पिता, वैभव, कीर्ति व नेतृत्व आदि।

ग्यारहवां स्थान—आमदनी, ऐश्वर्य, बड़े भाई-बहन, पुत्र-वधू आदि।

बारहवां स्थान—व्यय, आंख, हानि, दुःख, गरीबी, पाप, अपराध, पुलिस केस, सजा, बुरी आदतें आदि।

इस तरह प्रत्येक भाव के विचारणीय विषय को अपने मस्तिष्क में बिठा लेना चाहिए। यदि भाव बलवान् है तो उस भाव से सम्बन्धित बातों की बढ़ोत्तरी होगी, अन्यथा हानि समझनी चाहिए।

भाव का बल जानना

भाव में कौन-सा ग्रह बैठा है? उस भाव का स्वामी कौन है? उस भाव का कारक कौन है? इन तीन बातों से भाव के बल को परखना चाहिए। आशय यह है कि भाव के अच्छे या बुरे फल पर इन बातों का प्रभाव पड़ता है कि उस भाव में स्थित ग्रह, भावेश तथा भाव कारक ये तीनों जिस स्थिति में होंगे, उसका प्रभाव सम्बन्धित भाव पर अवश्य पड़ेगा।

यहां हम पाठकों को पुनः याद दिलाना चाहेंगे कि सूर्य, मंगल, शनि, राहु व केतु ये पाप या अशुभ ग्रह हैं। चन्द्र, बुध, गुरू, शुक्र, शुभ या सौम्य ग्रह हैं। प्रायः शुभ ग्रह अच्छा फल देते हैं तथा पाप ग्रह क्रूर फल देते हैं। लेकिन दुष्ट स्थानों में शुभ ग्रह तथा शुभ स्थानों में पाप ग्रह अच्छा फल नहीं देते।

बुध पापी ग्रहों के साथ होने पर पापी होता है। चन्द्र कृष्ण पक्ष दशमी से शुक्ल पंचमी तक क्रूर माना जाता है।

शुभ व अशुभ स्थान—कुण्डली के 6-8-12 स्थानों को दुष्ट स्थानों की संज्ञा दी गई है। केन्द्र (1-4-7-10) व त्रिकोण (5-9) स्थान शुभ कहलाते हैं। 3-6-11 स्थान क्रूर होते हैं। अतः केन्द्र त्रिकोण में शुभ ग्रह तथा दुष्ट स्थानों व क्रूर स्थानों में क्रूर ग्रह शुभ फल देते हैं।

भावों के कारक—हम वता चुके हैं कि किसी भी स्थान का विचार करते समय वहां पर स्थित ग्रहों तथा भावेश (भाव में स्थित राशि का स्वामी) व कारक का विचार आवश्यक है। भावों के 'कारक' अर्थात् फल कारक ग्रह इस प्रकार हैं—

भाव	कारक	भाव	कारक	भाव	कारक
1	सूर्य	5	गुरु	9	सूर्य, गुरु
2	गुरु	6	शनि, मंगल	10	सूर्य, बुध, वृह० शनि
3	मंगल	7	शुक्र	11	गुरु
4	चन्द्र, बुध	8	शनि	12	शनि

भावों में स्थिति से ग्रहों की शुभाशुभता

यद्यपि स्वभावतः ग्रह क्रूर या सौम्य होते हैं, लेकिन उनके स्वभाव का निर्णय, कुण्डली में वे किस स्थान पर हैं, इससे भी किया जाना चाहिए। आचार्यों का मत है कि त्रिकोण (5-9) स्थानों का स्वामी, कोई भी ग्रह हो सदा शुभ फल देता है। (3-6-11) स्थानों का स्वामी यदि पाप ग्रह है तो भी वृद्धि करेगा तथा इन स्थानों का स्वामी यदि शुभ ग्रह है तो भाव को नुकसान पहुंचाएगा। इसी तरह केन्द्र स्थान (1-4-7-10) के स्वामी शुभ ग्रह शुभ फल नहीं देते तथा अशुभ ग्रह अच्छा फल प्रदान करते हैं।

फलादेश के सामान्य नियम

1. भाव ँ ि ात ग्रह, भावेश व भाव कारक यदि वली हैं तो शुभ अन्यथा अशुभ फल प्रदान करेंगे ।
2. (6-8-12) स्थानों के स्वामी जहां भी होंगे, उन्हीं स्थानों की हानि करेंगे।
3. ग्यारहवें स्थान में सभी ग्रह प्रायः शुभ होते हैं, लेकिन केतु आय वढ़ाने वाला व उत्साहवर्धक होता है।
4. जिस ग्रह पर शुक्र, बुध या गुरु की दृष्टि होती है तथा दूसरे ग्रहों की दृष्टि नहीं होती तो वह ग्रह वली होकर शुभ फल देता है।
5. अपनी राशि, मित्र की राशि, उच्च राशि, मूल त्रिकोण राशि या इनके नवांशों में ग्रह वलवान् होते हैं। विपरीत स्थिति में निर्वल समझना चाहिए।
6. यदि भाव का कारक उसी स्थान में अकेला हो तो भाव को बिगाड़ता है।
7. छठे स्थान में गुरु, आठवें शनि, दसवे मंगल वहुत शुभ होते हैं।
8. दूसरे, पांचवें व सातवें स्थान में अकेला गुरु भाव की हानि करता है। केन्द्र (लग्न को छोड़कर) में गुरु परम वलवान् हो जाता है।
9. केन्द्र में शनि अशुभ है तथा अन्य भावों में प्रायः शुभ होता है।

इस तरह ग्रहों के वलावल व स्थिति के अनुसार फलादेश की रूपरेखा वनाकर, जन्म लग्न व जन्म राशि के शील स्वभावानुसार उसे तोलकर तुलनात्मक ढंग से कुछ कहने के लिए अग्रसर होना चाहिए।

किसी भी ग्रह या स्थान को देखते ही अच्छा या बुरा समझने

की भूल कभी न करें। नवांश आदि तथा स्थित ग्रहों के बलाबल का गम्भीर मनन करके ही कोई धारणा बनानी चाहिए। किस लग्न में पैदा होने वाला व्यक्ति सामान्यतः कैसा होता है ? यह हम आगे बता रहे हैं—

जन्म लग्न के अनुसार फल

मेष—जन्म के समय यदि मेष लग्न हो तो जातक (Native) का औसत कद, सुघड़ शरीर, तीव्र स्वभाव, लालिमापूर्ण आंखें, महत्त्वाकांक्षी, साहसी, कमजोर टांगें, स्त्रीप्रिय, अभिमानी तथा अस्थिर धनवाला होता है।

यदि लग्न पर क्रूर ग्रहों का प्रभाव हो तो व्यक्ति आवेशात्मक व झगड़ालू हो जाता है। ये लोग प्रायः स्थिर स्वभाव के नहीं होते, अतः जीवन में ये बार-बार काम बदलते हैं। फिर भी इनमें बला की कार्य कुशलता तथा कभी निराश न होने का गुण होता है। इनका स्वभाव प्रायः गरम होता है तथा ये अपने ऊपर पड़ी जिम्मेदारी को जल्दी ही निबटाना पसन्द करते हैं। अर्थात् काम में विलम्ब करना इनका स्वभाव नहीं होता है। ये भोजन के शौकीन होते हैं; लेकिन फिर भी कम भोजन कर पाते हैं तथा जल्दी भोजन करना इनका स्वभाव होता है। कभी-कभी इनके नाखूनों में विकार देखा जाता है। ये लोग साहसिक कामों में अपनी प्रतिभा का विस्तार कर सकते हैं।

वृष—इस लग्न के जातक मध्यम शरीर, चर्वी रहित तथा शौकीन स्वभाव के होते हैं। ये प्रायः सुदर्शन व्यक्तित्व के स्वामी होतें हैं तथा कई स्त्रियों से भोग करने की लालसा रखते हैं। प्रायः रंग खुलता गेहुआं तथा बाल चमकदार होते हैं। इनकी जांघें मजबूत तथा इनकी चाल मस्तानी होती है। इनमें धैर्य खूब होता है, इसीलिए बहुत जल्दी ये लोग उत्तेजित नहीं होते

हैं। यथासम्भव क्रोधित होने पर ये लोग खूंख्वार हो जाते हैं। ये लोग प्रायः प्रबल इच्छा शक्ति रखते हैं तथा जीवन में बहुत सफलता प्राप्त करते हैं। ये जल्दवाज़ी में कोई कदम नहीं उठाते। ये धन कमाते हैं तथा संसार के सारे सुखों को भोगना चाहते हैं। इनके जीवन का मध्य भाग काफी सुखपूर्वक व्यतीत होता है। इनके यहां कन्या सन्तान की अधिकता होती है।

मिथुन—मिथुन लग्न में उत्पन्न बालक लम्बे कद व चमकीले नेत्रों वाला होता है। इनकी भुजाएं प्रायः लम्बी देखी गई हैं। ये लोग प्रायः खुश मिजाज व चिन्तारहित होते हैं। ये लोग प्रायः प्राचीन शास्त्रों में रुचि रखते हैं तथा कुशल वक्ता होते हैं। अपनी बात को प्रभावी ढंग से पेश करना इनकी विशेषता होती है। इनकी नाक लम्बी व ऊंची होती है। ये लोग स्त्रियों या अपने से कम उम्र के लोगों से दोस्ती रखते हैं। इनकी एकतरफा निर्णय करने की शक्ति कुछ कम होती है। ये लोग कई व्यवसाय कर सकते हैं। स्वभावतः भावुक होते हैं तथा भावावेश में कभी अपना नुकसान सहकर भी परोपकार करते हैं। ये लोग उच्च बौद्धिक स्तर के होते हैं तथा शीघ्र धनी बनने के चक्कर में कभी-कभी सट्टा या लॉटरी का शौक पाल लेते हैं। इनकी मध्यावस्था प्रायः संघर्षपूर्ण होती है। ये लोग कवित्व शक्ति से भी पूर्ण होते हैं।

कर्क—इस लग्न के लोग छोटे कद वाले होते हैं। इनका शरीर प्रायः मोटापा लिए होता है तथा जलतत्त्व राशि होने के कारण जल्दी सर्दी की पकड़ में आ जाते हैं। इनके फेफड़े कमजोर होते हैं। इन्हें नशीले पदार्थों का शौक होता है। इनका जीवन प्रायः परिवर्तनशील होता है। पूर्वावस्था में इन्हें संघर्ष करना पड़ता है। इनकी कल्पना शक्ति अच्छी होती है तथा लेखन का इन्हें शौक होता है। आवेश इनकी कमजोरी होती है तथा

जीवन में ये तेज रफ्तार से दौड़ना चाहते हैं। ये लोग प्रायः मध्यावस्था में धन व सम्मान अर्जित करते हैं तथा स्वयं को कुछ श्रेष्ठ मानते हैं। इनकी स्मरण-शक्ति भी अद्भुत देखी गई है। ये लोग प्रायः बातूनी होते हैं। यदि सप्तम स्थान पर शुभ ग्रहों का प्रभाव न हो तो इनका वैवाहिक जीवन सुखी नहीं होता। गृहस्थ जीवन से ये बहुत लगाव रखते हैं। धन जमा करना इनका स्वप्न होता है। इन्हें अच्छी चीजों का शौक होता है। इनकी विचारधारा कभी बहुत शूरतापूर्ण तथा कभी बहुत भीरु होती है। जीवन के तीसरे पहर में इन्हें विरासत में धन-सम्पत्ति भी प्राप्त होती है।

सिंह—इस लग्न के बालक तीक्ष्ण स्वभाव वाले तथा क्रोधी होते हैं। इनका कद मध्यम व व्यक्तित्व रौबीला होता है। इन्हें पेट व दांत के रोग होने की सम्भावना रहती है। महत्त्वाकांक्षा बहुत होती है। ये लोग अपनी बात के बहुत हठी होते हैं तथा उच्चाधिकार प्राप्त होने पर ये खूब रौब जमाते हैं। इनका वैवाहिक जीवन प्रायः सुखी नहीं होता। ये लोग राजनीति में भी पड़ते हैं। ये लोग दूसरों पर अधिक विश्वास रखते हैं। प्रायः कृपालु व उदार-हृदय वाले ये लोग बहुत न्यायप्रिय होते हैं। माता के ये अधिक दुलारे होते हैं। इन्हें अभक्ष्य भक्षण का भी शौक होता है। पुत्र कम होते हैं तथा सन्तान भी कम होती है।

कन्या—इस लग्न के व्यक्ति प्रायः मोटे नहीं होते तथा इनकी तोंद कम निकलती है। ये लोग समय-चतुर तथा बुद्धिमान होते हैं। औपचारिक शिक्षा में इनकी अभिरुचि कम होती है। ये लोग दुनियादारी में काफी तेज होते हैं।

ये लोग शास्त्र के अर्थ को समझने वाले, गणित प्रेमी, चिकित्सा या ज्योतिष का शौक रखने वाले तथा गुणी होते हैं।

ये लोग विवाह देर से करते हैं तथा विवाह के बाद गृहस्थी में रम जाते हैं। इनकी भौंहें आपस में मिली होती हैं तथा ये श्रृंगार प्रिय होते हैं। इनका झुकाव धन इकट्ठा करने की तरफ अधिक होता है। ये परिवर्तनशील स्वभाव के होते हैं। अतः ये हरफन मौला बनने का प्रयास करते हैं। यदि कमजोर लग्न हो तो भाग्यहीन होते हैं तथा बली लग्न में संघर्ष के बाद अच्छी सफलता पाते हैं।

इन्हें यात्राओं का बहुत शौक होता है। इनकी अभिरुचियों में स्त्रीत्व का प्रभाव पाया जाता है।

तुला—इस लग्न के लोगों का व्यक्तित्व शानदार तथा आकर्षक होता है। इनकी नाक लम्बी व रंग गौरा होता है। ये मूल रूप से बड़े धार्मिक, सत्यवादी, इन्द्रियों को वश में करने वाले तथा तीव्र बुद्धि वाले होते हैं। ये धीर गम्भीर स्वभाव रखते हैं। यदि अष्टम स्थान तथा बृहस्पति पर शुभ प्रभाव हो तो ये सांसारिक होते हुए भी मानवीय मूल्यों की मिसाल होते हैं। क्रूर प्रभाव पड़ने से प्रायः तेज, चालाक व शारीरिक श्रम करने वाले हो जाते हैं।

इन लोगों में वैराग्य की भावना भी जाग सकती है। ये लोग प्रायः सांसारिक सम्बन्धों को अधिक विस्तार नहीं देते हैं तथा प्रायशः अपने परिवार के विरोध का सामना करते हैं।

इनकी कल्पना शक्ति व विचारों का स्तर सामान्यतः उन्नत होता है। ये लोकप्रियता प्राप्त करते हैं। कई बड़े सत्पुरुषों का जन्म तुला लग्न में हुआ है। महात्मा गांधी व विवेकानन्द तुला लग्न के व्यक्ति थे। तुला लग्न के व्यक्ति बहुत प्रेममय होते हैं। ये लोग प्रायः लेखक, उपदेशक, व्यापारी आदि भी पाए जाते हैं।

वृश्चिक—इस लग्न के लोग संतुलित शरीर के होते हैं तथा इनके घुटने व पिंडलियां गोलाई लिए होती हैं। ये लोग अपनी बात पर अड़ जाते हैं, प्रायः ये बिना सोचे समझे भी बात को पकड़ कर अड़ते हैं। यद्यपि इनकी कल्पना शक्ति तीव्र होती है तथा ये बुद्धिमान भी होते हैं लेकिन अपने निकटवर्ती धोखे बाज को भी नहीं पहचान पाते। अक्सर ठगे जाने पर अक्ल मंदी दिखाते हैं। इन्हें आसानी से किसी तरफ भी मोड़ा जा सकता है। ये कामुक स्वभाव के होते हैं तथा विवाहित स्त्रियों के अतिरिक्त भी स्त्रियों से शारीरिक सम्बन्ध रखते हैं। दिखने में सरल होते हैं लेकिन अनेक फलितवेत्ता इस बात से सहमत हैं कि इनमें छिपे तौर पर पाप करने की प्रवृत्ति होती है।

स्वभावतः ये खर्चीले स्वभाव के होते हैं; लेकिन अधिकांश खर्च अपने आराम व शौक पर करते हैं।

इनका घरेलू जीवन अक्सर अस्त व्यस्त होता है। यदि शुभ प्रभाव से युक्त लग्न हो तो इनकी रुचि गुप्त विद्याओं की तरफ हो जाती है। शुभ प्रभाव वाले लग्न में उत्पन्न होने पर ये कुशल प्रशासक भी होते हैं।

धनु—ये लोग अच्छी शारीरिक गठन वाले होते हैं। शुभ प्रभाव होने पर ये लोग काफी सुन्दर होते हैं। लग्न पर बुरा प्रभाव होने पर इनके दाँत व नाक मोटे हो जाते हैं। ये परिश्रमी तथा धैर्यवान होते हैं। ये लोग जल्दी निर्णय नहीं ले पाते तथा काफी सोच विचार के उपरान्त ही कोई काम करते हैं। ये जोशीले व आलस्य रहित होते है, अतः जीवन में ये काफी आगे बढ़ते हैं। ये लोग अक्सर सत्यवादी तथा ईमानदार होते हैं लेकिन शनि, राहु, मंगल का प्रभाव लग्न पर हो तो ये प्रायः स्वार्थी व धोखेबाज भी बन जाते हैं। तब इनकी कथनी व करनी में बहुत अन्तर होता है। प्रायः ये लोग धनी तथा भाग्य-

शाली होते हैं।

मकर—इस लग्न के लोग लम्बे कद के निकलते हैं। इनका शारीरिक विकास धीरे धीरे होता है। ये दिखने में कठोर व्यक्तित्व वाले होते हैं। ये लोग दूसरों की वात को वड़े ध्यान से सुनते हैं तथा सुन-सुनकर ही वहुत कुछ सीखते हैं। इनकी सहन शक्ति वहुत होती है। ये लोग हर एक वात को बड़े व्यावहारिक दृष्टिकोण से देखते हैं। ये लोग धीरे-धीरे सन्तोष से अपना काम करते हैं। यदि लग्न पर अशुभ प्रभाव हो तो ये लोग धोखेवाज, जेब कतरे, चोर तथा दादागिरी दिखाने वाले हो जाते हैं। इसके विपरीत शुभ प्रभाव होने पर ये ईमानदार तथा कर्तव्यनिष्ठ होते हैं। ये लोग अन्धभक्ति करने वाले, स्नेह से सब कुछ न्यौछावर करने वाले तथा शक्ति से वश में न होने वाले होते हैं। ये लोग वहुत परिश्रमी होते हैं तथा सवके प्रति वड़ा सेवा भाव रखते हैं यदि इनके स्वाभिमान की रक्षा होती रहे तो बड़े-वड़े दान-पुण्य के महान कार्य कर देते हैं। ये अड़ियल होते हैं तथा मुसीवत का सीना तान कर सामना करते हैं। प्रायः ये पुरानी विचार धाराओं को मानने वाले होते हैं।

कुम्भ—इस लग्न के व्यक्ति पूरे लम्बे कद तथा लम्बी गरदन वाले होते हैं। ये लोग वहुत सन्तुलित स्वभाव वाले तथा एकान्त प्रिय देखे गए हैं। संघर्ष करने की इनमें क्षमता होती है। ये लोग अपने सिद्धान्त के लिए सव कुछ दांव पर लगा सकते हैं। इनका कभी-कभी थोड़े समय के लिए बहुत भाग्योदय हो जाता है। ये लोग वीस वर्ष के उपरान्त ही सफलता पाना शुरू करते हैं। इनके काम रातों रात सम्पन्न नहीं होते, अपितु मेहनत से करने पड़ते हैं। इन्हें अपनी वात समझाकर अपने ढंग से चलाना वड़ा मुश्किल कार्य होता है। लेकिन वात समझ में आने पर ये पूरी ईमानदारी व तत्परता से उसे मान लेंगे। इन्हें

जीवन में प्रायः हर सिरे से असन्तोष होता है। ये लोग अपने असन्तोष को कभी-कभी संघर्ष की शक्ल में या विद्रोह के रूप में प्रकट करते हैं। शारीरिक कष्ट सहने की इनमें अद्भुत क्षमता पाई.जाती है। इनका विवाह थोड़ी देर से तथा अक्सर बेमेल होता है। ये लोग सबको अपने ढंग से चलाने का प्रयास करते हैं। प्रायः इनका भाग्योदय स्थायी नहीं होता है। फिर भी ये अपने क्षेत्र में बहुत प्रसिद्ध होते हैं।

मीन—इस लग्न के व्यक्ति प्रायः नाटे देखे जाते हैं। इनका माथा औसत शरीर के अनुपात से थोड़ा बड़ा दिखता है। ये लोग जीवन में बेचैनी अनुभव करते हैं तथा कभी कभी दार्शनिकता की तरफ झुक जाते हैं। ये लोग अस्थिर स्वभाव के होते हैं। इनमें अभिनेता, कवि, चिकित्सक, अध्यापक या संगीतकार बनने योग्य गुण होते हैं। इन्हें प्रायः पैतृक सम्पत्ति प्राप्त होती है तथा ये लोग उसे बढ़ाने की पूरी कोशिश करते हैं। भीतरी तौर पर ये लोग दब्बू तथा डरपोक होते हैं।

इन्हें सन्तान अधिक होती है। तथा ये स्वभाव से उद्यमी नहीं होते हैं। इन्हें जीवन में अचानक हानि उठानी पड़ती है। यदि बृहस्पति अशुभ स्थानों में अशुभ प्रभाव में हो तो प्रारम्भिक अवस्था में इनके जीवन की सम्भावना क्षीण होती है।

इस तरह हमने जाना कि जन्म लग्न मानव स्वभाव व उसके व्यक्तित्व की संरचना में बड़ा योगदान करता है। लग्न पर प्रभाव से उपर्युक्त गुणों में न्यूनता या अधिकता देखी जाती है। यदि लग्नेश बलवान होकर शुभ स्थानों में शुभ ग्रहों से दृष्ट या युत हो तो बहुत से दोषों को दूर कर देता है।

चन्द्र (जन्म) राशि का फल

जिस तरह जन्म लग्न से व्यक्ति की आकृति-प्रकृति व शील

प्रभावित होता है, उसी तरह चन्द्र लग्न भी इस सन्दर्भ में बहुत महत्त्वपूर्ण है। विद्वानों का मत है कि चन्द्र कुण्डली को भी वही स्थान देना चाहिए, जो फलादेश में जन्म कुण्डली को दिया जाता है। अतः चन्द्रमा जिस राशि में है, यह देखकर पीछे जो चन्द्र कुण्डली बनाने की बात कही गयी थी, उसके अनुसार भी व्यक्ति के गुणों व अवगुणों को परख लेना चाहिए। ध्यान रखिए, मनुष्य जीवन व स्वभाव परस्पर विरोधी बातों से भरा पड़ा है। अतः जन्म, चन्द्र, नवांश आदि कुण्डलियों से प्राप्त निष्कर्षों का समन्वय करके एक संतुलित धारणा बनाकर मनुष्य के व्यक्तित्त्व का विश्लेषण करना चहिए। **विभिन्न राशियों में चन्द्र होने पर क्या फल होता है यह संक्षेप में यहां बताया जा रहा है**—

मेष—यदि मेष में चन्द्र हो, अर्थात् चन्द्र लग्न मेष हो तो व्यक्ति, साहसी, आक्रामक, खतरे उठाने वाला, कामुक, विजयी, सम्पत्तिवान् लेकिन उतावला होता है।

वृष—प्रसन्नचित्त, दानी, सुन्दर स्वभाव, स्त्रीलोभी, कुशाग्र-बुद्धि, धनी तथा लोकप्रिय होता है।

मिथुन—विद्वान्, भोगशील, अध्ययन का व्यसनी, नेत्र रोगी, अपनी अवस्था से कम दिखने वाला, मर्मज्ञ, गुप्त विद्याओं का प्रेमी, कामशास्त्र का विद्वान् तथा हास्य प्रिय होता है।

कर्क—कफ रोगी, विद्वान्, धनी, राजयोग वाला, ऊंचे विचार, ज्योतिषी, जलप्रिय, धनी तथा विदेश यात्राओं का शौकीन होता है।

सिंह—स्वाभिमानी, दांत व पेट का रोगी, पुराने विचारों वाला, हठी, गम्भीर तथा शान-शौकत वाला होता है।

कन्या—सुन्दर, धनी, ईमानदार, सदाचारी, विद्वान्, कला प्रिय व लालित्य का प्रशंसक होता है।

तुला—न्यायप्रिय, धनी, जमींदार, सन्तोषी, आस्तिक व संतुलित मन वाला होता है।

वृश्चिक—नास्तिक, भावुक, बन्धु विरोधी, धनी, आत्महत्या करने की संभावना वाला तथा हठी होता है।

धनु—साहित्य प्रेमी, रसिक, धनी, सुन्दर, शिल्प प्रेमी, सुखी, लेखक, विरासत से धनी तथा सुखी होता है।

मकर—प्रसिद्ध, धर्मप्रिय, कविता व संगीत का प्रेमी, समझदार तथा सुखी वैवाहिक जीवन वाला होता है।

कुम्भ—गुप्त विद्याओं का प्रेमी, धनी, नीति कुशल, नशा करने वाला, लम्बा व दूरदर्शी होता है।

मीन—विलास प्रिय, मोती माणिक्य आदि का संग्रहकर्ता, स्त्री से जल्दी प्रभावित होने वाला, लोकप्रिय, शिल्पी तथा खुश किस्मत होता है।

इस तरह से जन्म, चन्द्र व नवांश कुण्डली तथा भावमध्य चक्र, चलित चक्र से तुलनात्मक अध्ययन करते हुए मनुष्य के विषय में कोई निर्णय लेना चाहिए। किसी भी स्थान का विचार करते समय उस भाव का अन्य भावों से सम्बन्ध तथा उस पर पड़ने वाली शुभाशुभ ग्रहों की दृष्टि का भी विचार कर लेना चाहिए। शुभ ग्रहों की दृष्टि भाव को बल प्रदान करती है।

विंशोत्तरी दशा का फल

कुण्डली में स्थित ग्रह अपने बलाबल के अनुसार सामान्यतः सदा प्रभाव दिखाते हैं लेकिन अपनी दशा अन्तर्दशा में इनका विशेष फल देखा जाता है। यहां पर प्रत्येक ग्रह की महादशा का फल नहीं बताया जा रहा है, किन्तु दशा व अन्तर्दशा का फल जानने का विश्लेषणात्मक ढंग बता रहे हैं। इससे आपको ग्रह

की दशा में उसके वास्तविक फल व फल की मात्रा का अनुमान सहज ही लग जाएगा। दशा फल विचार के प्रसंग में निम्न बातों का सावधानी से परीक्षण कीजिए—

1. ग्रह जिस भाव में स्थित है, उस भाव से सम्बन्धित फल देगा।

2. जिस स्थान का स्वामी या कारक होगा, उससे सम्बन्धित फल देगा।

3. जिन स्थानों पर जिस अनुपात से दृष्टि रखेगा, उन भावों का भी उसी अनुपात से फल देगा।

4. जिन ग्रहों की राशि में होगा, जो ग्रह उसे देखते होंगे, जिनके साथ या जिनके बीच में ग्रह घिरा होगा, उन सब ग्रहों के शील व स्वभाव से अपने शुभाशुभ फल में कमी या वृद्धि करेगा।

5. ग्रह स्वभावत: शुभ या अशुभ है, लेकिन कुण्डली में अपनी राशि, उच्च राशि, मित्र राशि या स्व उच्च मित्र के नवांश अथवा वर्गोत्तमांश में पड़ा होगा तथा वक्री या अस्त नहीं होगा तो सदा ऊपर बताए गए नियमों से सम्बन्धित भावों के फल की वृद्धि करेगा।

6. यदि ग्रह शत्रु राशि, नीच राशि, अशुभ ग्रहों से ग्रस्त तथा निर्बल होगा तो अपनी दशा में सम्बन्धित भावों के फल की हानि करेगा।

7. कोई भी ग्रह अपनी महादशा में अपनी ही अन्तर्दशा में अपना पूरा फल नहीं देता।

8. सभी ग्रह अपने समानधर्मी या सम्बन्धी ग्रह की अन्तर्दशा में अपना पूरा फल देते हैं।

अर्थात् शुभ ग्रह का शुभ ग्रहों से तथा पाप ग्रहों से समान धर्मत्व होता है।

सम्बन्धी ग्रह का निर्णय

ग्रहों के सम्बन्ध चार तरह के होते हैं—

(क) जो ग्रह एक ही राशि में हों तो परस्पर सम्बन्धी होते हैं।

(ख) ग्रह एक-दूसरे की राशि में हों। जैसे शनि तुला में तथा शुक्र कुम्भ में।

(ग) आपस में पूर्ण दृष्टि रखने वाले ग्रह सम्बन्धी होते हैं।

(घ) यदि ग्रह किसी अन्य ग्रह की राशि में बैठकर अपने राशीश को देखता हो, लेकिन राशीश उसे न देखता हो तब भी सम्बन्धी होता है।

इन चारों सम्बन्धों में 'ख' और 'ग' सम्बन्ध श्रेष्ठ हैं। शेष सम्बन्ध सामान्य समझे जाते हैं।

9. पाप ग्रह में पाप ग्रह की अन्तर्दशा कष्ट कारक होती है।

10. 6-8-12 स्थानों के स्वामी की अन्तर्दशा कष्टकारक, अशुभ होती है।

11. शुभ ग्रह की महादशा में शुभ ग्रह की अन्तर्दशा सुखकारी होती है।

12. राहु व केतु यदि 3-6- 1 अथवा त्रिकोण (5-9) स्थानों में हों तो इनकी दशा अच्छा फल देती है।

भावेशों के अनुसार दशा फल

1. प्रथम भाव के स्वामी ग्रह की दशा शरीर सुख व धनागम देती है।

2. द्वितीयेश की दशा से धन लाभ लेकिन शारीरिक कष्ट होता है।

3. तृतीयेश की दशा धन की कमी व शारीरिक कष्ट करने वाली होती है।

4. चतुर्थेश की दशा धन, सम्पत्ति, वाहन, यश तथा विद्या की वृद्धि करती है।

5. पंचमेश की दशा में धन, विद्या का लाभ तथा सन्तान लाभ होता है।

6. षष्ठेश की दशा में रोग, चोट तथा शत्रुभय होता है।

7. सप्तमेश की दशा कष्टकारक, अवनति देने वाली तथा आर्थिक कष्ट देने वाली होती है।

8. अष्टमेश की दशा में मृत्युभय होता है। अष्टमेश पाप ग्रह हो तथा शनि राहु से दृष्ट हो तो मृत्यु होती है।

9. नवमेश की दशा भाग्योदय कारक, समृद्धि देने वाली तथा रुके कार्यों में सफलता देती है।

10. दशमेश की दशा में राज्य से लाभ, सम्मान व पद की प्राप्ति होती है। प्रायः माता के लिए कष्टकारक होती है।

11. एकादशेश की दशा धन लाभ, ख्याति तथा व्यापारिक उन्नति देती है। सामान्य रूप से यह दशा अच्छी होती है।

12. द्वादशेश की दशा में हानि, नेत्र रोग, चिन्ताएं तथा शरीर में कष्ट होता है।

ग्रहों का फल अपने दशाकाल में सदा एक समान नहीं रहता। बृहत्पाराशरी के दशाफलाध्याय में कहा गया है कि ग्रह यदि राशि के प्रथम द्रेष्काण (1°-10° तक) में हो तो दशा के आरम्भ में, मध्य द्रेष्काण (11°-20° तक) में दशा के मध्य भाग

में तथा अन्तिम द्रेष्काण में होने पर अन्तिम भाग में फल होता है। यदि ग्रह वक्री हो तो फल प्राप्ति का क्रम विपरीत होगा। अर्थात् तीसरे द्रेष्काण में होने पर दशा के आरम्भ में, मध्यम द्रेष्काण में होने पर दशामध्य में तथा प्रथम द्रेष्काण में होने पर दशा के अन्त में फल मिलेगा।

ग्रहों के विशेष वर्ष—वलवान या निर्बल ग्रह मनुष्य को अपने वलावल के अनुसार आयु के निम्नलिखित वर्षों में विशेष फल देते हैं—

सूर्य 22 वें वर्ष में, चन्द्रमा 24 वें वर्ष में, मंगल 28 वें में, बुध 32 वें में, गुरु 16 वें वर्ष में, शुक्र 25 वें वर्ष में, (या विवाह के उपरान्त) शनि 36 वें वर्ष में, राहु 42 वें वर्ष में तथा केतु 44 वें वर्ष में विशेष फलकारी होगा।

जो वलवान ग्रह जिस स्थान को पुष्ट कर रहा हो, अपने वर्ष में वह उस भाव से सम्बन्धित फल को अवश्य देगा। इसी आधार पर मनुष्य का भाग्योदय वर्ष भी जाना जाता है। भाग्येश अर्थात् नवम स्थान का स्वामी जो ग्रह हो, उसी ग्रह के वर्ष की आयु में मनुष्य का भाग्योदय समझना चाहिए।

कुण्डली से प्रत्येक वर्ष का फल जानना—

ग्रह अपना फल कव देगा। इसके लिए विद्वानों ने एक पद्धति वताई है। उसका शास्त्रीय नाम है—सुदर्शन पद्धति। इसके लिए जन्म लग्न, चन्द्र लग्न व सूर्य लग्न इन तीनों से तुलनात्मक ढंग से गवेषणा करके शुभाशुभ फल जाना जाता है। इसी पद्धति की अनुपूरणी के रूप में प्रत्येक वर्ष का फल जानने के लिए कुण्डली के प्रत्येक स्थान को एक-एक वर्ष मान लिया जाता है। तात्पर्य यह है कि जन्म कुण्डली में लग्न से द्वादश स्थानों में क्रमशः मनुष्य की आयु के जन्म से लेकर वारह वर्षों

तक का प्रतिनिधित्व माना गया है। लग्न भाव आयु के पहले वर्ष का परिचायक है। दूसरा भाव दूसरे आयु वर्ष का प्रतिनिधित्व करता है। इसी तरह क्रमशः चलते चलते वारहवां भाव वारहवें वर्ष का प्रतिनिधि है। आगे की आयु के लिए वार-वार आवृत्ति की जाती है। अतः तेरहवें वर्ष का प्रतिनिधि पुनः जन्म लग्न भाव हो जाता है एवं दूसरी आवृत्ति में वारहवां भाव चौवीसवें वर्ष का प्रतिनिधि माना जाएगा। इसी तरह 36—48—60 आदि वर्षों का प्रतिनिधित्व जीवन भर वारह स्थानों में माना जाएगा।

अव हमें जिस आयु वर्ष का फल जानना हो, उसी के स्थान में पड़ने वाली राशि का स्वामी ग्रह यदि वलवान है तो शुभ फल करेगा। वह ग्रह जिस स्थान का स्वामी है उसकी तो वृद्धि करेगा ही, साथ ही उस वर्ष में उन स्थानों से सम्वधित वस्तुओं की भी वृद्धि करेगा, जिनमें वह स्थित है तथा जिस स्थान का वह कारक है। यदि ग्रह निर्वल है तो जिस स्थान का स्वामी है जिस स्थान का कारक है तथा जिस स्थान में वैठा है उसकी हानि करेगा।

एक अन्य प्रकार (गोचर पद्धति)—

ग्रह अपनी दशा में, अन्तर्दशा में, अपने विशेष वर्ष में तथा आयु वर्ष के प्रतिनिधि होने के कारण मनुष्य के विशेष आयु के वर्ष में तो अपना फल दिखाता ही है। इन सवके अतिरिक्त भी मनुष्य को वह अपना शुभ या अशुभ फल देता है। वह फल कव होगा? इसके लिए हमें देखना है कि सभी ग्रह वर्तमान में किन राशियों में भ्रमण कर रहे है? जन्म कुण्डली में जो ग्रह वलवान होगा वह ग्रह जीवन में जव जव आकाश चक्र में भ्रमण करते-करते अपने उच्च, अपनी राशि, मित्र की राशि या मूल त्रिकोण राशि में आएगा तथा पाप ग्रहों से मुक्त होगा, तव तव वह

मनुष्य को शुभ फल प्रदान करेगा। विशेषतया जिन भावों का वह अधिपति व कारक है तथा जिस स्थान में कुण्डली में बैठा है उन स्थानों से सम्बन्धित वस्तुओं की वृद्धि करेगा। इसके विपरीत यदि ग्रह नीच, अस्त, शत्रु राशिगत या वक्री होगा तो सम्बन्धित भाव की वस्तुओं की तब तक हानि करेगा, जब तक उक्त स्थिति में रहेगा।

जन्म राशि (जन्म कालीन चन्द्र राशि) से जब गोचर में भ्रमण करते करते शुभ ग्रह अच्छे शुभ स्थानों पर आएंगे तो वृद्धिकारक तथा अशुभ ग्रह अशुभ फल करेंगे। अर्थात् जन्म राशि से माना कि शनि आठवीं राशि में इस समय भ्रमण कर रहा है तो अपने राशि भ्रमण काल में अशुभ फल (भय, रोग, वध, बन्धन) देगा। इसी तरह बृहस्पति जन्म राशि से नवीं राशि में भाग्योदय कारक तथा सम्मान दिलाने वाला सिद्ध होगा।

गोचर से शुभाशुभ समय का विचार करते समय निम्न बातों को ध्यान में रखना चाहिए—

(i) जन्म कुण्डली में निर्बल तथा दुष्ट स्थानों (6-8-12) का स्वामी गोचर में शुभ राशियों व स्थानों में जाने पर भी कम शुभ फल देगा।

(ii) कुण्डली में बलवान होकर तथा शुभ स्थानों का स्वामी होकर जो ग्रह होगा, वह गोचर में जब-जब शुभ स्थानों, मित्र, उच्च या स्व राशि में आकर मित्र ग्रहों से युक्त या दृष्ट होगा तो अवश्य शुभ फल देगा।

(iii) जन्म कुण्डली का शुभ व बलवान् ग्रह गोचर में अशुभ होने पर भी कोई विशेष अशुभ फल नहीं देगा।

(iv) गोचर में ग्रह जब अपनी गति बदलता है, अर्थात्

मार्गी से वक्री तथा वक्री से मार्गी होगा तो उन दिनों अपना शुभ या अशुभ फल (जैसा हो) विशेष दिखाएगा।

(v) राशि में चलते-चलते कौन-सा ग्रह कब अपना विशेष फल दिखाएगा ? इसके लिए अनेक फलित ग्रन्थों के कथनानुसार यह सिद्धांत प्रचलित है कि सूर्य व मंगल राशि के पहले द्रेष्काण में, बृहस्पति व शुक्र मध्य द्रेष्काण में तथा चन्द्रमा शनि अन्तिम द्रेष्काण में अपना फल दिखाते हैं। राहु व बुध सारी राशि में समान फल देते हैं।

शनि की साढ़ेसती व ढ़ैया का विचार

ग्रह मनुष्य को अपना प्रभाव कब दिखाएँगे ? इस विषय में कई सिद्धांत अभी तक बताए जा चुके हैं। उपर्युक्त सिद्धांत सभी ग्रहों पर लागू होते हैं; लेकिन शनि के लिए आचार्यों ने एक विशेष प्रकार भी बताया है। अनुभव प्रमाण है कि इस प्रकार से शनि का शुभाशुभ फल अवश्य मिलता है। शनि का यह विशेष समय दो प्रकार का होता है—प्रथम साढ़े सात साल का तथा द्वितीय ढ़ाई साल का। यही कारण है कि प्रथम अवधि को साढ़ेसती व दूसरी को ढ़ैया कहते हैं। इन दोनों काल खण्डों का शास्त्रीय नाम क्रमशः बृहत्कल्याणी व लघुकल्याणी है। बृहत्कल्याणी अर्थात् साढ़ेसती कैसे जानी जाती है, इस विषय में मनुष्य की जन्मराशि अर्थात् जन्म के समय चन्द्रमा जिस राशि में था, उस राशि को आधार माना जाता है। जो लोग प्रसिद्ध नाम से साढ़े सती या ढ़ैया का विचार करते हैं, वह अत्यन्त स्थूल गणना है। जन्मकालीन चन्द्रमा जिस राशि में होता है, उससे बारहवीं राशि में तथा दूसरी राशि में जब शनि आता है तो साढ़ेसती होती है। शनि एक राशि में ढ़ाई साल रहता है। अतः तीन राशियों के साढ़े सात साल माने गए हैं।

जन्म राशि से बारहवीं राशि में शनि आने पर साढ़ेसती सिर पर होती है, इसे चढ़ती साढ़ेसती कहते हैं। जन्म राशि में रहने पर ढाई वर्षों के लिए हृदय पर तथा दूसरी राशि में पैरों पर उतरती साढ़ेसती होती है।

जन्म राशि से चौथी व आठवीं राशि में शनि होने पर ढाई वर्षों के लिए शनि की ढ़ैया होती है।

साढ़ेसती व ढ़ैया सदा अशुभ नहीं होती

सामान्यतः यह समझा जाता है कि शनि की साढ़ेसती या ढ़ैया महान् अशुभ फल कारक होती है। विशेषतया ढ़ैया को तो मृत्युकारक भी समझा गया है। लेकिन वस्तु स्थिति ऐसी नहीं है। साढ़ेसती व ढ़ैया के अन्तराल में शनि सुख समृद्धि देने वाला भी होता है। यह इस बात पर अधिक निर्भर करता है कि जन्म कुण्डली में शनि किस स्थिति में है? यदि शनि जन्म के समय त्रिकोणेश, लग्नेश अथवा 3-6-11 स्थानों का स्वामी होकर, मित्र ग्रहों से दृष्ट होकर 5-9-3-6-11 में ही बैठा हो तो शनि धन सम्पत्ति बढ़ाने वाला होगा। अर्थात् साढ़ेसती के समय मनुष्य आर्थिक उन्नति करेगा। यदि उक्त समय में दशा अन्तर्दशा भी अच्छी चल रही हो तो अधिक शुभ फल मिलेगा। इसके विपरीत कुण्डली में शनि 2-7-8-12 स्थानों का स्वामी होकर अशुभ ग्रहों से युक्त या दृष्ट हो तो अत्यन्त कष्टकारक साढ़ेसती होती है। आशय यह है कि जन्म कुण्डली में शनि योगकारक होगा तो अच्छी साढ़ेसती व ढ़ैया बीतेगी तथा अशुभ होने पर बुरा फल देगी। अतः साढ़ेसती व ढ़ैया को सदा अशुभ समझने का भ्रम नहीं करना चाहिए। साढ़ेसती व ढ़ैया का अशुभ फल यह बताया गया है--

रोग, बन्धुओं से विरोध, झूठी बदनामी, मृत्यु, बन्धन, लोहे

से भय, देश त्याग, अधिक चिन्ता, व्यवसाय हानि, आग का डर, पुत्र, स्त्री व पशु को पीड़ा तथा धन नाश।

कुछ चुने हुए योग

कुण्डली विचार में योगों का बड़ा महत्त्व है। योग का अर्थ है—ग्रहों का कुछ विशेष जोड़। अर्थात् ग्रह जब विशेष परिस्थिति में कुछ खास योग बनाते हैं तो शुभ या अशुभ दोनों प्रकार का फल देते हैं। अभी तक जितना भी फल विचार किया गया है, उससे हमें जीवन के विशेष वर्षों का विशेष फल जानने में सहायता मिलेगी। लेकिन कुण्डली का ऐसा सामान्य फल जिससे समन्वित रूप से व्यक्ति की शक्ति, बुद्धि, सामाजिक स्तर, धन व पद आदि का ज्ञान हो सके, योगों पर ही निर्भर होता है। सभी की कुण्डली में शुभ व अशुभ योग होते हैं। सारे शुभ या सारे अशुभ योग एक कुण्डली में पाना कठिन है। देखना यह होता है कि कुण्डली में शुभ या अशुभ योगों की संख्या कितनी है। जिनकी संख्या का अनुपात होगा, वैसा ही फल मनुष्य को मिलेगा।

राज योग

राजयोग का अर्थ है—ऐसे योग जो मनुष्य को जीवन में धन, सम्पत्ति, पद व यश देते हैं। किसे कितना मिलेगा? इसका निर्णय कुण्डली के बल, योगकारक ग्रहों के बल तथा व्यक्ति की परिस्थिति व वातावरण से ही जाना जा सकेगा। समान शक्ति के राजयोग होने पर भी प्रायः लोग अलग-अलग जीवन स्तर के देखे गए हैं। कल्पना कीजिए कि किसी की कुण्डली में पैतृक सम्पत्ति प्राप्त करने का योग है तो उस सम्पत्ति की वास्तविक मात्रा तो पिता की अर्जित सम्पत्ति की मात्रा से प्रभावित होगी ही। मध्यम वर्ग के व्यक्ति को पैतृक सम्पत्ति जितनी मिलेगी

अपनी स्थिति के अनुसार तथा एक धनी पुत्र को पैतृक सम्पत्ति मिलेगी अपनी हैसियत के अनुसार। दोनों की कुण्डली में पैतृक सम्पत्ति प्राप्ति के योग होते हुए भी दोनों की वास्तविक उपलब्धियों में अन्तर रहेगा। एक उदाहरण और देखिए। एक मूंगफली बेचने वाले व एक मिल मालिक के लिए माना कोई वर्ष तरक्की तथा लाभ का आता है। दोनों को बराबर ताकत वाले योग मिले हैं, लेकिन ऐसा होते हुए भी मूंगफली विक्रेता के लाभ की असली रकम मिल मालिक के लाभ की रकम से कई गुना कम ही होगी। कहने का तात्पर्य यह है कि कुण्डली में यदि राजयोग है तो इसका मतलब यह नहीं लगाना चाहिए कि अमुक व्यक्ति राजा होगा। योगों का वास्तविक प्रभाव ऊपर बताई गई दूसरी बातों से भी प्रभावित होगा। यही कारण है कि राजयोग वाले लोग सरकारी नौकर या अच्छे व्यापारी अथवा बड़े नामी भी देखे जाते हैं। कुछ चुने हुए राजयोग ये हैं—

(1) केन्द्र के स्वामी ग्रह का त्रिकोण के स्वामी ग्रह से सम्बन्ध राजयोग कारक है।

(2) नवमेश दशम में, दशमेश नवम में हो।

(3) नवमेश व दशमेश नवम या दशम में एकत्र हों।

(4) नवम में नवमेश या दशम में दशमेश अथवा दोनों में एक ग्रह अपने स्थान में हो।

(5) लग्नेश व दशमेश का किसी शुभ स्थान में एकत्र होना।

(6) दशमेश व लग्नेश का स्थान सम्बन्ध हो।

(7) दो या तीन ग्रह उच्च राशि, स्वराशि, मित्र राशि या नवांश में शुभ स्थानों में हों।

(8) नीच राशि का वक्री ग्रह शुभ स्थानों में हो।

(9) बलवान ग्रह केन्द्र व त्रिकोण में स्थित हो।

(10) एकादशेश का लग्नेश, पंचमेश, धनेश या चतुर्थेश से

सम्बन्ध हो।

(11) लग्न या चन्द्रमा से 6-7-8 भावों में बुध, गुरू, शुक्र तीनों हों तो प्रवल शुभ राजयोग होता है।

(12) चन्द्रमा से दूसरे या बारहवें स्थानों में बलवान् शुभ ग्रह हों।

(13) चतुर्थेश व नवमेश एक-दूसरे से केन्द्र स्थानों (4-7-10) में स्थित हों।

(14) सूर्य से दूसरे स्थान में चन्द्र को छोड़कर कोई शुभ ग्रह हों।

(15) सूर्य से बारहवें स्थान में या दूसरे व बारहवें दोनों में शुभ ग्रह हों।

कुछ अन्य योग—

इन योगों में जहां पर सब ग्रहों का कथन किया है, वहां पर सबसे तात्पर्य सूर्यादि सात ग्रहों से है। राहु व केतु का उनमें ग्रहण नहीं है।

(i) रज्जु योग

सभी ग्रह चर राशियों में हों तो यह योग होता है। इस योग में उत्पन्न व्यक्ति सुदर्शन व्यक्तित्व वाला, भ्रमण प्रिय, जन्म स्थान से दूर जाकर उन्नति करने वाला होता है।

(ii) मुसल योग

यदि सारे ग्रह स्थिर राशियों में हों तो यह योग बनता है। ऐसा व्यक्ति धनी, प्रसिद्ध, पुत्रों वाला, बड़ा अधिकारी तथा राज-सम्मान पाने वाला होता है।

(iii) नल योग

द्विस्वभाव राशियों में सभी ग्रह स्थित हों तो उक्त योग

बनता है। ऐसा व्यक्ति धन इकट्ठा करने वाला, लोक चतुर, व सफल राजनीतिक होता है।

(iv) माला योग

यदि केन्द्र स्थानों में (लग्न को छोड़कर) बुध, गुरू व शुक्र हों तथा शेष ग्रह केन्द्र स्थानों में नहीं हों तो माला योग होता है। यह वहुत शुभ योग है। इस योग में पैदा होने वाला व्यक्ति शौकीन, धनी, सुखी अनेक स्त्रियों स प्रेम रखने वाला तथा शासनाधिकारी होता है।

(v) गदा योग

यदि सारे ग्रह (1-4) स्थानों में अथवा सातवें, दसवें स्थानों में ही हों तो यह योग बनता है। ऐसा व्यक्ति धर्मात्मा, शास्त्रों को जानने वाला, संगीत प्रेमी तथा धनी होता है। ऐसे व्यक्ति का भाग्योदय 28 वें वर्ष में होता है।

(vi) पक्षी योग

यदि चौथे और दसवें स्थानों में हीं सारे ग्रह हों तो पक्षी-योग होता है। ऐसा व्यक्ति भ्रमणशील, राजदूत, धनी तथा उन्मुक्त स्वभाव का होता है।

(vii) शृंगाटक योग

यदि पहले स्थान व त्रिकोण स्थानों में ही सारे ग्रह हों तो यह योग बनता है। ऐसा व्यक्ति कर्मवीर सैनिक, रणकुशल तथा वीरता के कामों से सम्मानित होता है।

(viii) कमल योग

सारे ग्रह यदि लग्न सहित चारों केन्द्र स्थानों में हों तो कमल योग होता है। इस योग में उत्पन्न होने वाला व्यक्ति परम भाग्यशाली, राजा, दीर्घायु, यशस्वी, धनी तथा बहुत प्रभाव वाला होता है।

(ix) वापी योग

यदि केन्द्र में कोई ग्रह न हो तथा सारे ग्रह शेष स्थानों में हों तो वापी योग होता है। ऐसा व्यक्ति प्रायः चतुर, कुशल वक्ता, सद्‌गृहस्थ, कलाप्रिय तथा राजयोग वाला होता है। परन्तु इस योग वाले व्यक्ति प्रायः संघर्षशील जीवन बिताते है।

(x) नौका योग

लग्न स्थान से लगातार सातवें स्थान तक यदि सभी ग्रह हों तो उक्त योग बनता है। ऐसा व्यक्ति समुद्र यात्रा करने वाला, नौसैनिक, गोताखोर, धनी लेकिन कंजूस होता है।

(xi) छत्र योग

यदि सातवें स्थान से आगे सात स्थानों में लगातार सभी ग्रह हों तो छत्र योग होता है। ऐसा व्यक्ति लोकप्रिय, उच्च पदासीन, ईमानदार तथा बड़े परिवार वाला होता है।

(xii) चक्र योग

यदि लग्न से वैकल्पिक स्थानों में, अर्थात् (1-3-5-7-9-11) स्थानों में सभी ग्रह हों तो चक्र योग होता है। ऐसा व्यक्ति प्रखर राजनीतिज्ञ, राष्ट्रपति या राज्यपाल अर्थात् सर्वोच्च अधिकारी प्रभुसत्ता सम्पन्न होता है।

(xiii) गोल योग

सारे ग्रह यदि एक ही राशि में हों तो गोल योग होता है। ऐसा व्यक्ति सेना या पुलिस का अधिकारी, शक्ति सम्पन्न लेकिन चालाक तथा कम पढ़ा लिखा होता है।

(xiv) दाम योग

सभी ग्रह छह राशियों में हों तो दाम योग होता है। ऐसा व्यक्ति प्रसिद्ध, परोपकारी, ऐश्वर्यवान्, पुत्रवान् होता है।

(xv) वीणा योग

सात राशियों में सभी ग्रह होने से यह योग बनता है। ऐसा व्यक्ति धनी, नेतृत्व गुण वाला, संगीत, वाद्य, गीत का प्रेमी होता है।

(xvi) गजकेसरी योग

यदि वृहस्पति बलवान होकर चन्द्र कुण्डली या लग्न कुण्डली से केन्द्र स्थानों में हो तथा शुभ ग्रहों की उस पर दृष्टि हो तो यह योग बनता है। ऐसा व्यक्ति बहुत प्रसिद्ध, अधिकार सम्पन्न नम्र तथा नगर, राष्ट्र, मंडल आदि का निर्माता होता है।

कुछ अशुभ योग

(1) शूल योग

यदि तीन राशियों में सभी ग्रह हों तो यह योग बनता है। ऐसा व्यक्ति हिंसक, जेल जाने वाला, आलसी, गरीब, तेज स्वभाव तथा बहादुर होता है।

(2) पाश योग

पांच राशियों में सभी ग्रह होने से व्यक्ति दुःखी, बड़े परिवार वाला, गुप्चतर तथा ढोंगी होता है।

(3) केमद्रुम योग

चन्द्रमा से बारहवें तथा दूसरे स्थानों में यदि सूर्य को छोड़ कर कोई अन्य ग्रह न हो तो केमद्रुम योग होता है। ऐसा व्यक्ति दरिद्र होता है। विद्वानों ने इसके कई भेद बताए हैं—

(क) लग्न या सप्तम में चन्द्रमा हो तथा उसे गुरू न देखता हो।

(ख) सब ग्रह निर्बल हों।

(ग) शुक्र तथा शनि दोनों नीच राशि, शत्रु राशि, पांप राशि,

में हों तथा परस्पर देखते हों, अथवा दोनों एक ही राशि में हों।

(घ) चन्द्रमा पाप ग्रह के नवांश, पाप राशि अथवा पाप ग्रह से युक्त हों।

(ङ) रात में जन्म हो तथा कमजोर चन्द्रमा पर दशमेश की दृष्टि हो।

(च) रात में जन्म हो तथा क्षीण चन्द्रमा नीच राशिगत ग्रह से युक्त हो।

ये सब केमद्रुम योग के ही भेद हैं। इनमें पैदा होने वाला व्यक्ति यदि राजा के कुल में भी उत्पन्न हुआ हो तो दरिद्र होता है।

केमद्रुम भंग योग

निम्नलिखित स्थितियों में केमद्रुम योग अपना प्रभाव नहीं दिखाता।

(क) केन्द्रगत चन्द्रमा गुरू से दृष्ट हो।

(ख) केन्द्र में शुक्र हो।

(ग) चन्द्रमा शुभग्रहों से युत हो तथा गुरू से दृष्ट हो।

(घ) चन्द्रमा के साथ कोई भी ग्रह (सूर्य को छोड़कर) हो।

(ङ) पूर्ण चन्द्रमा लग्न में हो तथा शुभ ग्रहों से युक्त हो।

(च) चन्द्रमा दसवें स्थान में हो तथा गुरू उसे देखता हो।

यदि केमद्रुम योग के साथ ये भी पड़े हों तो यह योग निष्क्रिय हो जाता है।

(4) ह्रद योग

यदि कुण्डली में सब ग्रह नीच राशि में हों तो उक्त योग होता है। ऐसा व्यक्ति, निर्धन, निर्भाग्य व दुःखी होता है।

(तीन चार ग्रह नीच राशि में होने पर भी मनुष्य आनु-

पातिक ढंग से कमजोर भाग्य का होता है। मंगल, शनि, चन्द्र व बुध नीच होने पर विशेष कष्ट होता है।)

(5) फणि योग

जन्म कुण्डली में कुम्भ में सूर्य, मेष में शनि, कन्या में शुक्र तथा वृश्चिक में चन्द्रमा हो तो उक्त योग होता है। इसमें जन्म लेने वाला व्यक्ति विकल, परेशान तथा निर्धन होता है।

यहां संक्षेप में कुछ शुभ व अशुभ योगों से आपका परिचय कराया है। योगों की संख्या हजारों है तथापि सारभूत योगों के यहां देने का प्रयास किया है। किसी भी प्रकार के योग का विचार करते समय उन ग्रहों का बल या अबल देखना परमावश्यक है जिन ग्रहों से विचारणीय योग बनता है। शुभ ग्रहों में बली ग्रहों द्वारा बनाए गए शुभ योगों का फल पूरा-पूरा मिलता है। बल के अनुपात से भी फल का अनुपात समझ लेना चाहिए। साधारणतः यदि एक भी कारक (फल कारक) ग्रह स्वस्थ व बली हो तो व्यक्ति सफल जीवन निर्वाह करता है। शुभ योगों के साथ-साथ अशुभ योगों के होने से भी शुभ प्रभाव घटता है। इसी तरह अशुभ योगों के साथ यदि शुभ योग भी हों तो अशुभ फल में अवश्य कमी आ जाएगी। उदाहरण के लिए किसी की कुण्डली में 'पाश योग' पड़ा है जिसका फल बन्धन, सजा, गरीबी आदि होता है। लेकिन हम ऐसे व्यक्ति को जानते हैं जिसे पाश योग होने के साथ-साथ दो योगकारक ग्रह (मंगल, गुरू) शुभ स्थानों में हैं। अतः उनके साथ बन्धन की घटना तो दूर, कभी पुलिस थाने में भी वे सज्जन नहीं गए हैं। साथ ही ठीक खाते पीते हालात में हैं। आशय यही है कि किसी एक-दो योग को देखकर आंखें मूंदकर यह धारणा नहीं बना लेनी चाहिए कि बस, अब तो सारा शुभ या अशुभ फल अवश्य मिलेगा। सारे योगों का फल सदा साधक-बाधक प्रमाणों व योगों को दृष्टि में

रखकर कहना चाहिए। किसी एक-आध अशुभ योग को देखकर ही मन में निराशा नहीं भर लेनी चाहिए। कौन ग्रह किसी अन्य ग्रह द्वारा दिए जा रहे अशुभ फल को दूर कर सकता है, इस विषय में फलितवेत्ताओं ने एक सिद्धान्त बताया है। उसे अगले अनुच्छेद में प्रस्तुत किया जा रहा है। योगों के शुभाशुभ फल का विचार करते समय इस का भी ध्यान रखना चाहिए।

ग्रह एक दूसरे के कुप्रभाव को काटते हैं

वैद्यनाथ ने अपने ग्रन्थ में बताया है कि राहु के कारण यदि कोई बुरा फल मिल रहा हो; लेकिन बुध का राहु से सम्बन्ध हो, अर्थात् राहु पर बुध का प्रभाव हो, अथवा कुण्डली में बुध बलवान् शुभ स्थानों में हो तो राहु का कुफल समाप्त हो जाएगा। इसी तरह राहु व बुध के दोष को अकेला शनि शान्त कर देता है। इन तीनों (रा. बु. श.) के दोष को मंगल समाप्त करता है। चारों (रा. बु. श. मं.) के दोष को अकेला शुक्र धो देता है। पांचों के दोष को (रा. बु. श. मं. शु.) गुरू नष्ट करता है। छहों (रा. बु. श. मं. शु. गु.) के दोष का नाश करने में अकेला चन्द्रमा सक्षम है। सूर्य (उत्तरायण में विशेष) सातों ग्रहों के कुप्रभाव को शान्त करने की सामर्थ्य रखता है।

तात्पर्य यह हुआ कि अकेला बृहस्पति, चन्द्रमा या सूर्य जन्म कुण्डली में बलवान् होकर बैठा हो तो समझ लीजिए कि काफी कुफल का अंश समाप्त हो गया।

ध्यान रखिए, एक दो समर्थ ग्रह होने पर भी मनुष्य सफल, सुखी व शान्तिपूर्ण जीवन बिता लेता है।

ग्रहों का बलाबल ज्ञान

ग्रहों के बलाबल के लिए ग्रहों के 6 प्रकार के बल बताए गए हैं। सामान्यतः स्वराशि, उच्चराशि, मित्रराशि, मार्गी,

शुभ ग्रहों से दृष्ट व शुभ स्वामी बलवान होता है तथा विपरीत स्थिति में निर्बल होता है। तथापि 6 प्रकार के बल से ग्रह के सही-सही बल का पता लगता है। ये 6 प्रकार वे हैं जिनसे ग्रह का बल बढ़ता है—

(1) **स्थान बल**—ग्रह यदि उच्च, मित्र, स्वराशि में, मूल त्रिकोण राशि में, नवांश में भी इसी तरह मित्रोच्चादि राशियों में हो तो स्थान से बल प्राप्त होता है, अर्थात् ग्रह बली होता है। केन्द्र में स्थित ग्रहों को पूरा स्थान बल मिलता है। सप्तवर्गों में यदि स्व, उच्च या मित्र की राशि में ग्रह हों तो स्थान बली होते हैं।

(2) **दिग्बल**—बुध व बृहस्पति लग्न में, सूर्य व मंगल दशम स्थान में, शनि को सप्तम स्थान में और शुक्र चन्द्र को चतुर्थ स्थान में दिग्बल मिलता है।

(3) **चेष्टा बल**—सूर्य और चन्द्रमा मकर से मिथुन राशि तक बली होते हैं। मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र व शनि वक्री होने पर या चन्द्रमा से 12° अंशों के भीतर होने पर चेष्टा बली होते हैं।

(4) **काल बल**—सूर्य, बृहस्पति व शुक्र दिन में बली होते हैं। चन्द्र, मंगल और शनि रात्रि बली हैं। बुध सदा बली होता है। इसी तरह शुभ ग्रह शुक्ल पक्ष में तथा अशुभ ग्रह कृष्णपक्ष में कालबली होते हैं। बुध प्रातःकाल, सूर्य दोपहर में, शनि सायंकाल, मंगल रात के पहले पहर में, चन्द्रमा आधी रात में व शुक्र रात के अन्तिम पहर में बली होता है। बृहस्पति सदा कालबली होता है।

(5) **दृष्टि बल**—शुभ ग्रह यदि देखते हों तो दृष्टि बल मिलता है। अशुभ ग्रहों की दृष्टि से दृष्टि बल घट जाता है।

(6) **नैसर्गिक बल**—सूर्य, चन्द्रमा, शुक्र, बृहस्पति, बुध, मंगल, शनि इस क्रम से सारे ग्रह कम बल वाले होते जाते हैं। अर्थात् सूर्य सर्वाधिक वली है, उससे कम चन्द्रमा, उससे कम शुक्र तथा क्रमशः शनि सबसे कम निसर्ग वल वाला होता है।

यहां हमने ग्रहों के बलों का सामान्य परिचय मात्र दिया है। अन्यथा, सभी ग्रहों का सही-सही वल गणित से निकाला जाता है, लेकिन प्रारम्भिक स्तर पर उसकी मात्रा निकालने का विशेष व्यावहारिक उपयोग नहीं है।

ग्रहों की अवस्थाएँ

ग्रहों के वल के अतिरिक्त ग्रहों की अवस्थाओं का भी कुण्डली देखते समय ध्यान रखना चाहिए। आकाश चक्र में भ्रमण करते हुए ग्रहों का विशिष्ट स्थिति में पहुँचना ही अवस्थाएँ हैं। अवस्थाओं का वर्गीकरण कई ढंग से किया जाता है।

दीप्तादि दस अवस्थाएँ

अपनी उच्च राशि में ग्रह 'दीप्त' होता है। अपनी राशि में 'स्वस्थ' होता है। अपने नैसर्गिक मित्र ग्रह की राशि में 'मुदित अर्थात् प्रसन्न' होता है। शुभ ग्रहों के नवांश, द्रेष्काण, द्वादशांश आदि में हो तो 'शान्त' अवस्था होती है। उच्च रश्मि व चेष्टा-रश्मियों से शुद्ध ग्रह 'शक्त' अवस्था वाला है। मतान्तर से वक्री होने पर ग्रह 'शक्त' अवस्था में होता है। उपर्युक्त अवस्थाएँ शुभ फल देनेवाली होती हैं। शक्तावस्था में थोड़ा मतभेद है। शुभ ग्रह भी वक्री होने पर बहुत ताकतवर हो जाते हैं, अतः शक्त अवस्था की शुभता या अशुभता का निर्णय करते समय यह देखना आवश्यक होगा कि ग्रह कहां स्थित है, किन स्थानों का स्वामी है तथा कहां पर दृष्टि सम्बन्ध रक्खे हुए है। अशुभ स्थानों में बली ग्रह हानिकारक भी होता है।

इनके अतिरिक्त पांच अन्य अवस्थाएँ हैं जिनमें ग्रह अपना स्वाभाविक बल व फल देने की सामर्थ्य खोता जाता है। वे अशुभ अवस्थाएँ इस प्रकार हैं—

शत्रुराशि या शत्रु नवांश में ग्रह 'दीन' अवस्था वाला होता है। अस्त होने पर 'विकलावस्था', नीच राशि में होने पर 'भीतावस्था', पाप ग्रहों के वर्ग में होने पर 'खल' अवस्था, राशि के अन्त में होने पर तथा ग्रहों द्वारा पराजित होने पर 'पीड़ित' अवस्था होती है। ये अवस्थाएँ सदा अशुभ फल देने वाली होती हैं।

ग्रहों की बाल-युवा-वृद्ध आदि अवस्थाएँ

ये अवस्थाएँ पाँच होती हैं : 6° अंशों की एक अवस्था होती है, अतः 30° अंशों की एक राशि में रहते हुए ग्रह की पाँचों अवस्थाएँ पूर्ण हो जाती हैं। विषम राशियों व सम राशियों में इनका क्रम अलग-अलग होता है—

विषम राशि	अवस्था	सम राशि
1°—6° अंश	बाल	25°—30° अंश
7°—12° ,,	कुमार	19°—24° ,,
13°—18° ,,	युवा	13°—18° ,,
19°—24° ,,	वृद्ध	7°—12° ,,
25°—30° ,,	मृत	1°— 6° ,,

11° अंशों से 18° अंशों तक 'युवावस्था' में ग्रह पूरा फल देता है। लेकिन सामान्यतः 6° अंश से अधिक 24° से कम होने पर भी ग्रह तारतम्य से फल देता है। बालावस्था में तथा मृत-अवस्था में फल का नाश समझना चाहिए।

ग्रहों की जाग्रत-स्वप्न-सुषुप्ति अवस्था

राशि में 10°-10° अंशों की ये अवस्थाएं होती हैं। जाग्रत्

(जागता हुआ) स्वप्न (सपने की अवस्था) तथा सुषुप्ति (सोता हुआ)। अतः सुषुप्ति अवस्था में ग्रह फल देने में असमर्थ होता है। ये अवस्थाएँ भी विषम व सम राशियों के अंशभेद से अलग अलग होती हैं—

विषम राशि	अवस्था	सम राशि
1°—10° अंश	जाग्रत	21°—30° तक
11°—20° अंश	स्वप्न	11°—20° तक
21°—30° अंश	सुषुप्ति	1°—10° तक

इन अवस्थाओं व बल से ग्रह की वास्तविक सामर्थ्य का अनुमान लगाकर आनुपातिक ढंग से तथा व्यक्ति की परिस्थितियों को देखकर बताए गए तथा आगे कहे जाने वाले सभी योगों का वास्तविक फलानुपात समझ कर ही बुद्धिमानी से किसी निष्कर्ष पर पहुँचना चाहिए।

कुछ अनुभूत अरिष्ट (शारीरिक कष्ट) योग :

पहले जो शुभ या अशुभ योग वताए गए हैं, उनका फल तभी मिलता है—जव व्यक्ति युवक होकर स्वयं कार्य क्षेत्र में आ जाता है, लेकिन इन अरिष्ट योगों का प्रभाव वालावस्था में ही विशेष रूप से रहता है। जातक ग्रन्थों में वालारिष्ट पर विस्तार से विचार किया गया है तथा योगों की संख्या सहस्राधिक ही है। आजकल उनमें से बहुत से योग प्रभावी नहीं रहे हैं। आशय यह है कि जो विशेष ताकतवर प्रवल अरिष्ट योग हैं, वे ही अपना फल दिखाते हैं। अल्प वली या सामान्य वली योग आज कल प्रभावी नहीं रहे हैं। आजकल 'छोटा परिवार सुखी परिवार' की धारणा के कारण, शिक्षा का अधिक प्रचार-प्रसार होने के कारण लोगों को कम वच्चे होते हैं तथा वे उनकी देखभाल भी पहले जमाने की अपेक्षा अधिक अच्छी तरह करते

हैं। दूसरा कारण यह है कि चिकित्सा विज्ञान ने इतनी तरक्की कर ली है कि उन बीमारियों पर काबू पाना बहुत सरल हो गया है जिन्हें कभी महामारी समझा जाता था तथा जिनके कारण माताएं सन्तान से वंचित हो जाती थीं। अतः बालकों की मृत्युदर (Death-Rate) का घटना स्वाभाविक ही है। यही कारण है कि हम यहाँ पर कुछ चुने हुए विशेष प्रभावकारी अरिष्ट योग ही दे रहे हैं—

(1) लग्नेश यदि षष्ठ, अष्टम या द्वादश स्थान में स्थित हो तो प्रायः कष्ट होता है।

(2) लग्न व चन्द्रमा दोनों पाप ग्रहों से युक्त हों, लग्नेश कमजोर हो तथा लग्न या चन्द्रमा पर शुभ ग्रहों की दृष्टि न हो तो अरिष्ट होता है।

(3) क्षीण चन्द्रमा बारहवें भाव में हो तथा उस पर राहु की दृष्टि हो।

(4) पापग्रह से युक्त लग्नेश सप्तम (मारक) स्थान में हो।

(5) लग्नेश अष्टम में तथा अष्टमेश लग्न में हो।

(6) सिंह राशि का शुक्र 6-8-12 स्थानों में स्थित हो तथा पापी ग्रहों की दृष्टि हो।

(7) सिंह के नवांश में शनि हो तथा उस पर राहु की दृष्टि हो। साथ ही चन्द्रमा चतुर्थ में एवं सूर्य षष्ठ में हो।

(8) जन्म राशि का स्वामी पापग्रहों से युक्त होकर आठवें स्थान में हो।

(9) सूर्य, चन्द्र व शनि तीनों एकत्र होकर 6-8-12 स्थानों में कहीं हों।

(10) चन्द्र व बुध दोनों केन्द्र में हों, शनि या मंगल (अस्त) की उन पर दृष्टि हो तो परम अरिष्ट जानना।

कुछ अरिष्ट भंग योग—

(1) कृष्ण पक्ष में दिन में तथा शुक्ल पक्ष में रात्रि में जन्म हो और चन्द्रमा 6 या 8 स्थान में हो तो सभी अरिष्ट योग भंग हो जाते हैं।

(2) जन्म राशि का स्वामी अथवा शुभ ग्रह केन्द्र स्थानों में हों।

(3) वलवान् चन्द्रमा सभी अरिष्टों का नाश करता है।

(4) उच्च का चन्द्रमा केन्द्र में हो तथा शुभ ग्रह उसे देखते हों तो सभी अरिष्ट भंग हो जाते हैं।

(5) कर्क, मेष या वृष राशि का राहु लग्न में हो तो परम रक्षक होता है।

(6) लग्न व चन्द्रमा पर शुभ ग्रहों की दृष्टि हो।

(7) मंगल, शनि या राहु 3-6-11 स्थानों में हों।

(8) वृहस्पति केन्द्र में हो, अथवा अपनी राशि या उच्च राशि में हो तो वहुत से दोषों का नाश करता है।

(9) सभी ग्रह मित्र ग्रहों की राशि में हों।

(10) सभी ग्रह शुभ ग्रहों के नवांश में हों।

यदि छोटे बच्चे की जन्मपत्री पर विचार कर रहे हों तो पहले अरिष्ट योगों व अरिष्ट भंग योगों पर नजर डाल लेनी चाहिए। इस ओर से निश्चिन्त होकर ही शेष वातों (विद्या, बुद्धि, सन्तान, सुख आदि) का विश्लेपण करना चाहिए।

(10)

संक्षिप्त आयु विचार

आचार्यों ने कहा है कि जन्म कुण्डली में सभी योग चाहे अच्छे हों या बुरे, हीनायु व्यक्ति के लिए बिलकुल बेकार हो जाएँगे। जैसे कुएँ से निकाला पानी यदि जमीन पर बिखेरते जाएँ तो निष्फल है तथा किसी स्वच्छ बड़े बर्तन में रखने से इच्छा (प्यास) शान्त करने में समर्थ है। अतः बुद्धिमान् व्यक्ति को जन्म कुण्डली का विश्लेषण करते समय सर्वप्रथम आयु का विचार करना चाहिए। जन्म कुण्डली का आठवाँ स्थान आयु स्थान होता है। फलित ज्योतिष का एक सिद्धान्त है कि हम जितनी संख्या वाले भाव का विचार कर रहे हों, उतनी संख्या वाले भाव का विचार भी उसी उद्देश्य से करना चाहिए। इस विषय को 'उत्तर कालामृत' में बड़े जोरदार शब्दों में स्थापित किया गया है। माना कि हम विद्या स्थान अर्थात् पञ्चम स्थान का विचार विद्या, बुद्धि, सन्तान व अचानक मिलने वाली सम्पत्ति के प्रसंग में कर रहे हों तो पाँचवें स्थान से पाँचवाँ अर्थात् नवें स्थान को भी विद्या स्थान की तरह देखना चाहिए। आयु के सम्बन्ध में भी यही बात लागू होती है। आठवाँ व आठवें से आठवाँ अर्थात् तीसरा स्थान आयु स्थान कहलाते हैं। किसी भी स्थान से बारहवाँ स्थान हानिकारक होगा। जैसे सातवें भाव के विचारणीय विषय अर्थात् स्त्री की हानि का

विचार सातवें से वारहवें अर्थात् छठे स्थान से किया जाता है। यही कारण है कि तीसरा व आठवाँ स्थान आयु अर्थात् जीवन के हैं तो इनसे वारहवें (2—7) स्थान जीवन की हानि के होने के कारण मारक स्थान कहे जाते हैं।

यह निश्चय हुआ कि मृत्यु या जीवन हानि का जब हम विचार करते हैं तो मारक स्थान (2—7) व इन स्थानों में स्थित राशियों के स्वामी (मारकेश) का भली प्रकार विचार करना आवश्यक हो जाता है। दोनों मारक व मारकेशों का विचार करते समय इनमें कौन अधिक प्रवल है, इसका विचार करना भी आवश्यक है।

मारक व मारकेश का विचार :—

प्रधानतः आठवें स्थान को मृत्यु का स्थान समझना चाहिए। अर्थात् इसी स्थान को मुख्य रूप से आयु स्थान मानना होता है। तीसरा स्थान इसकी अपेक्षा गौण है। इसीलिए आठवें स्थान से वारहवाँ स्थान अर्थात् सातवें स्थान को मुख्य मारक स्थान मानना युक्ति संगत है। इसकी अपेक्षा दूसरा मारक स्थान गौण होता है।

यद्यपि दुष्टस्थानों (6-8-12) में स्थित वक्री, नीच, अस्त तथा शत्रुराशिगत अनिष्ट प्रभाव दिखाता ही है; लेकिन मारक स्थानों का स्वामी विशेष अनिष्ट कारक हो जाता है। कारण यह है कि मृत्यु से वढ़कर इस संसार में जीवधारी का कोई अनिष्ट नहीं है। इन दोनों मारक स्थानेशों में जो ग्रह अधिक दुष्ट हो तो वह अधिक अनिष्टकारी होगा। यदि दोनों ग्रह समान शक्ति के हों तो इनमें सप्तमेश को ही प्रवल मानकर विचार करना चाहिए।

दूसरे व सातवें स्थान में स्थित ग्रह तथा इनसे व मारकेशों से सम्वन्ध रखने वाले (3-6-11) स्थानों के स्वामी भी मारक

ग्रह कहलाते हैं। सामान्यतः मारक ग्रह, मारकेश तथा सम्बन्धित ग्रहों की दशा अन्तर्दशा में हानि, अपयश, दुर्घटना, रोग अथवा वली होने पर मृत्यु तुल्य कष्ट होता है। अतः मारक या मारकेश की दशा अन्तर्दशा को आंख मूंद कर मृत्यु देने वाली नहीं समझना चाहिए।

स्थूल आयु जानना :—

स्थूल रूप से आचार्यों ने आयु को तीन भागों में बांटा है— दीर्घायु, मध्यायु व अल्पायु।

ऊपर बताए गए मारक ग्रहों की दशा अन्तर्दशा तो जीवन में कई वार आएगी। तब कौन-सी दशा मारक होगी, इसका निर्णय करने से पहले यह आवश्यक है कि हम जान लें कि मोटे अनुमान से व्यक्ति की आयु दीर्घ, मध्य या अल्प में से कौन-सी है। दीर्घायु 100 वर्षों के निकट होनी चाहिए। प्राचीन मत में इन तीनों प्रकार की आयु की भी तीन श्रेणियाँ मानी गयीं थीं—

दीर्घायु—(क) 120 वर्ष (ख) 108 वर्ष (ग) 96 वर्ष
मध्यमायु—(क) 80 वर्ष (ख) 72 वर्ष (ग) 64 वर्ष
अल्पायु—(क) 40 वर्ष (ख) 36 वर्ष (ग) 32 वर्ष

आजकल इतनी आयु प्रायः लोगों की नहीं होती। इसके अनेक कारण हैं, जैसे—भोजन, वातावरण, प्रदूषण, मानसिक तनाव आदि। अतः अनुभव तथा व्यावहारिकता का तकाजा है कि दीर्घायु की अन्तिम सीमा 90 वर्ष, मध्यमायु की 60 वर्ष तथा अल्पायु की अन्तिम सीमा 30 वर्ष मानी जानी चाहिए। दूसरे शब्दों में कहें तो प्राचीन मत के (ग) खण्ड वाली आयु को सर्वोच्च सीमा मान लेना चाहिए।

अब दीर्घ, मध्य व अल्पायु का निर्णय कैसे किया जाए? इस विषय में ज्योतिषियों में प्रसिद्ध जैमिनी मत आगे दे रहे हैं।

जैमिनी मत से आयु विचार :

आयु का विचार जैमिनी मुनि के अनुसार तीन चीजों से किया जाता है—(क) लग्नेश व अष्टमेश (ख) लग्न व चन्द्रलग्न (ग) लग्न व होरा लग्न।

यहाँ हम आपको याद दिला दें कि मेष, कर्क, तुला व मकर चर राशियाँ हैं। वष, सिह, वृश्चिक व कुम्भ स्थिर राशियाँ हैं तथा शेष द्विस्वभाव राशियाँ हैं।

इन्हीं चर, स्थिर व द्विस्वभाव के आधार पर कैसे दीर्घ, मध्य व अल्प आयु का निर्णय किया जाय इस विषय में जरा ध्यान से निम्नलिखित चक्र को देखना चाहिए—

दीर्घायु	मध्यमायु	अल्पायु
चर लग्नेश चर अष्टमेश	चर लग्नेश स्थिर अष्टमेश	चर लग्नेश द्विस्वभाव अष्टमेश
स्थिर लग्नेश द्विस्वभाव अष्टमेश	स्थिर लग्नेश चर अष्टमेश	स्थिर लग्नेश स्थिर अष्टमेश
द्विस्वभाव लग्नेश स्थिर अष्टमेश	द्विस्वभाव लग्नेश द्विस्वभाव अष्टमेश	द्विस्वभाव लग्नेश चर अष्टमेश

इसी तरह लग्न चन्द्र की राशि से भी आयु का निर्णय करना चाहिए। पुनः लग्न व होरा से भी इसी तरह देखना चाहिए। यहाँ पर होरा लग्न षड्वर्ग की होरा नहीं है। इसका साधन प्रकार आगे वताया जा रहा है। उपर्युक्त तीनों प्रकार से प्राप्त आयु को अलग लिखकर देखना चाहिए—

(1) तीनों तरह से जो आयु आवे, उसे ही प्रामाणिक मानना चाहिए।

(2) यदि दो तरह से एक व एक तरह से अन्य आयु आए तो दो तरह से प्राप्त आयु को प्रामाणिक मानना चाहिए।

(3) यदि तीनों तरह से अलग-अलग आयु आए तो जन्म

लग्न व होरा से प्राप्त आयु को प्रामाणिक समझना चाहिए।

(4) कुछ विद्वानों के मत से इसी तरह शनि व चन्द्रमा की राशियों से भी आयु का निर्णय करना चाहिए।

होरा लग्न स्पष्ट—

अपने इष्ट काल को 12 से गुणा कर जो राशि, अंश, कला विकला फल आए उसमें जन्म समय का सूर्य स्पष्ट रेखांश जोड़ देने से होरा लग्न आ जाता है।

उदाहरण—इष्ट काल माना 21/15 घड़ी पल है। इसे 12 से गुणा किया :

अंश कला

21·15×12=255 00

यहाँ अंशों में 30 का भाग देकर राशि जानी

255÷30=8.15.00

इसमें सूर्य स्पष्ट जोड़ा—

रा.	अं.	क.	वि.
8	15	00	00
+00	00	57	23

8 .15 .57 .23 होरा लग्न

अर्थात् धनु राशि का होरा लग्न हुआ।

बृहस्पति व शनि की विशेष भूमिका :

ऊपर बताए गए ढंग से जब आयु का निर्णय कर लिया जाय तो बृहस्पति व शनि की स्थिति पर भी विचार करना चाहिए। यदि शनि लग्नेश या अष्टमेश हो तो कक्षा हानि योग होता है। अर्थात् इस स्थिति में दीर्घायु का निर्णय हुआ हो तो मध्यमायु तथा मध्यमायु का निर्णय होने पर अल्पायु तथा अल्पायु का

निर्णय होने पर हीनायु समझनी चाहिए। लेकिन शनि उच्च, स्वराशि या वर्गोत्तम नवांश या उच्च स्व नवांश में हो तो कक्षा की हानि नहीं मानी जाएगी।

इसी तरह वृहस्पति का भी विचार कर लेना चाहिए। बृहस्पति यदि लग्न या सप्तम में हो अथवा शुभ स्थानों में स्थित गुरू को (विशेषत: केन्द्र गत) यदि शुभ ग्रह देखते हों तो कक्षा की वृद्धि हो जाती है। अर्थात् निर्णीत आयु की कक्षा आगे बढ़ी हुई मानी जाएगी।

मृत्यु कारक दशा का निर्णय :—

आचार्यों ने आयु का निर्णय करने में विंशोत्तरी दशा को मुख्य माना है। अतः दशा व अन्तर्दशा के काल में कब मृत्यु सम्भावित है, इसका निर्णय करने के लिए पहले निर्धारित दीर्घ, मध्य या अल्प आयु का विचार करके देखना चाहिए कि उक्त आयु प्रकार के अन्तिम वर्षों में कौन-सी दशा अन्तर्दशा चलेगी। अथवा यों कहना चाहिए कि आयु समाप्ति के सम्भावित काल में मारक ग्रहों की दशा कब आएगी। जब मारक ग्रह की महा-दशा में मारक ग्रह की अन्तर्दशा आएगी तो मृत्यु समझनी चाहिए। उदाहरणार्थ किसी की मध्यमायु का निर्णय पूर्वोक्त प्रकार से किया जा चुका है। अब उसके मारक व मारकेश (सुविधा के लिए दोनों को मारक कहा जा रहा है) ग्रहों का निर्णय कर लिख लेना चाहिए। मध्यमायु का मान 60 वर्ष अनुमानतः है। अतः 55 व 65 वर्ष की आयु के बीच जब-जब मारक ग्रहों की दशा में मारक की अन्तर्दशा आएगी तो मृत्यु की सम्भावना होगी। यदि कई दशाएं इसी तरह की आएं तो किस ग्रह की दशा में ऐसा होगा ? इसके लिए ग्रहों का बल, उनकी क्रूरता उन पर शनि राहु आदि की दृष्टि देखकर सबसे खतरनाक दशा व अन्तर्दशा का निर्णय कर लेना चाहिए।

प्रायः मनुष्य के जीवन की तीसरी, पाँचवीं व सातवीं महा-दशा में यदि मारक ग्रहों की दशा व अन्तर्दशा पड़े तो विशेष रूप से मृत्युदायक समझना चाहिए।

माना किसी का जन्म विंशोत्तरी दशा पद्धति के अनुसार शनि की महादशा में हुआ है तो शनि से तीसरी (केतु) की, शनि से पाँचवीं (सूर्य) की तथा शनि से सातवीं अर्थात् (मंगल) की महादशा को दीर्घ, अल्प आदि के अनुसार विशेष मारक समझना चाहिए।

ध्यान रखिए, दीर्घायु व्यक्ति को 80-90 वर्ष की आयु से पहले भी यदि मारक ग्रहों की दशा व अन्तर्दशा आएगी तो उसका फल रोग, अनिष्ट, आपत्ति, विप्लव, चोट, ऑपरेशन, दुर्घटना, व्यापार हानि, अर्थात् मृत्यु तुल्य कष्ट ही होगा।

यदि संयोगवश आयु की श्रेणी के समय में मारकेश ग्रह की दशा-अन्तर्दशा नहीं आए तो मृत्युकारक दशा का निर्णय इस तरह करना चाहिए—

(1) मारकेश ग्रहों के साथ यदि शनि का सम्बन्ध हो तो शनि की दशा मारने वाली होगी।
(2) व्ययेश (बारहवें स्थान का स्वामी) यदि पाप ग्रह हो तो इसकी दशा में मृत्यु की सम्भावना होती है।
(3) लग्नेश यदि (2-7) स्थानों में बैठा हो तो मारक होगा।
(4) मारक ग्रहों से सम्बन्ध रखने वाले ग्रहों की दशा में मृत्यु होगी।

कुछ मारकेश भी मृत्यु नहीं देते :

(1) सूर्य व चन्द्रमा मारक होने पर भी प्रायः मृत्युकारक नहीं होते।
(2) मारक ग्रहों में जो ग्रह लग्नेश का मित्र या अधिमित्र हो,

वह प्रायः प्राणघातक नहीं होता।

कुछ ग्रह मारक न होने पर भी मृत्यु देते हैं—

(1) यदि मारक ग्रहों के साथ शनि का सम्बन्ध हो तो वह सबको हटाकर स्वयं मारक बन जाता है।

(2) शनि, मंगल व राहु की दशा व अन्तर्दशाएँ प्रायः कष्ट देने वाली कदाचित् मृत्यु कारक होती हैं।

(3) लग्नेश का शत्रु या अधिशत्रु नियमतः मारक नहीं होने पर भी मृत्युदायक होता है।

इस तरह बुद्धि प्रयोगपूर्वक मारक दशाओं का निर्णय कर लेना चाहिए। आयु निर्णय वैसे एक बहुत कठिन विषय है तथा इसका निर्णय (वास्तविक) तो योगियों या सिद्ध पुरुषों द्वारा ही किया जा सकता है। बेचारा सामान्य मनोवृत्ति वाला पुरुष जो रागद्वेष, काम क्रोधादिक से आक्रान्त है भला क्यों कर आयु का निर्णय कर पाएगा। प्रारम्भिक जिज्ञासुओं द्वारा एक झटके में इस विषय में किसी निर्णय पर पहुंच जाना खतरे से खाली नहीं है। उपर्युक्त जानकारी को एक साधन के रूप में ही प्रयोग करना चाहिए। इसे ध्रुव सत्य मानना ईश्वर की सृष्टि को चुनौती ही समझें। वैसे, हमारे आर्ष शास्त्रों में स्पष्ट कहा गया है कि 12 वर्ष की आयु तक प्रयत्नपूर्वक बालक की रक्षा करनी चाहिए। तदुपरान्त ही योगों व कुयोगों का फल प्रभावकारी होता है। पराशर ऋषि ने तो यह सीमा 24 वर्ष (वयस्क होने तक) मानी है।

व्यावहारिक दृष्टिकोण यह है कि ये ऊपर बताए गए दीर्घ, मध्य व अल्प आयु योग उन्हीं लोगों पर ठीक-ठीक उतरते हैं, जो सदाचारी, धर्मनिष्ठ, शुद्ध व पौष्टिक भोजन करने वाले तथा ईश्वर भक्त हैं। ऐसा मत 'श्रीपति पद्धति' में प्रकट किया गया है।

इसके विपरीत जो लोग पापी, चोर, लम्पट, तस्कर, चरित्र-हीन, वहुत खाने वाले तथा देव, ब्राह्मण, शास्त्र के निन्दक हैं उनकी असमय में ही मृत्यु हो जाया करती है। (देखें श्रीपति पद्धति, अध्याय 5, श्लोक 37-38)।

उदाहरण के लिए देखिए, कोई रेडियो खरीदा, जिसकी गारंटी दो साल दी गई। उसकी सामान्य आयु 10 साल मानी गई, अर्थात् सामान्य परिस्थितियों में यह उपकरण 10 वर्षों तक आपकी सेवा करता रहेगा, ऐसा अलिखित विश्वास बनाया गया। यह समय उसकी आयु हुआ।

अव यह देखना भी जरूरी है कि यदि उपकरण के साथ दुर्व्यवहार किया जाए तो वह 6 माह में या उससे भी कम समय में नष्ट हो सकता है। यह दुर्घटना उसकी अकाल मृत्यु हुई। यदि उसे पानी में डालकर, आग में जलाकर, छत से गिराकर हम विक्रेता से कहें कि देखिए आपने तो इसकी गारंटी दो वर्षों की दी थी लेकिन यह तो उससे वहुत पहले ही नष्ट हो गया तो वताइए इसमें विक्रेता या निर्माता का क्या दोष ? तात्पर्य यह है कि सामान्य आयु विचार तथा दुर्घटना का विचार विद्वान् ज्योतिषी कभी भी गड्डमड्ड करके नहीं देखते। फिर भी आयु विचार के साथ-साथ अकाल मृत्यु का विचार भी परम आवश्यक है।

हमें भगवान् से जितनी आयु मिली है यदि उसे हम अपने दुर्व्यसनों से या अपने कुतर्कों से कम कर लें, चलती ट्रेन से कूद कर कहें कि वताइए हमारी दशा अन्तर्दशा तो ठीक थी, मारक मारकेश विचार भी शुद्ध था, तव वताइए हमारी हड्डियां क्यों टूटीं ? तो भला इस स्थिति में शास्त्र भी क्या कर सकेगा ?

कहने का तात्पर्य यह है कि अरिष्ट विचार, अरिष्ट भंग विचार, आयु विचार, मारक ग्रह व मारक दशा का विचार करके, बाद में राजयोगादि शुभ योगों का विचार करना चाहिए।

(11)

सामान्य जिज्ञासा के विषय

सर्वसाधारण अपनी सन्तान की जन्मपत्री बनवाने के समय कुछ विशेष ज्ञातव्य बातों को जानना चाहता हैं। उदाहरणार्थ उत्तर भारत के हरियाणा, उत्तर प्रदेश व राजस्थान आदि प्रान्तों में घर में लड़का उत्पन्न होने पर नामाक्षर जानते समय ज्योतिषी से यह भी पूछा जाता है कि बालक किस पाए (पाद) में हुआ है। बालक के दादा दादी तो इसी बात को जानकर कि बालक शुभ पाए में हुआ है, फूले नहीं समाते। उनके लिए सारी जन्मपत्री का निचोड़ पाए में ही है। वास्तव में इसी तरह की सामान्य जिज्ञासा की बातें जनसाधारण में प्रचलित हैं। उन्हें जानने के लिए वह तत्पर रहता है। जैसे—बालक मूल (गण्ड मूल) नक्षत्रों में पैदा हुआ है या नहीं? हमारा बालक मंगली तो नहीं? आदि। इस प्रकरण के लिखने का हमारा उद्देश्य यही है कि जब प्रारम्भिक जिज्ञासु जन्मपत्री बना लेगा तो ये सामान्य जिज्ञासा की बातें भी स्वयं ही जान सकेगा। देहात में तो पंडित जी की योग्यता इन सामान्य बातों पर ही निर्भर करती है। जन-साधारण उसे ही विद्वान् समझता है जो इनका, सही उत्तर दे सके। इस क्रम में हम यहाँ सर्वप्रथम पाद (पाए) का विचार बता रहे हैं।

(i) पाद (पाए) जानना :—

सारे जन्म लग्न को, अर्थात् कुण्डली के वारहों स्थानों को चार भागों में बाँटा गया है। प्रत्येक भाग एक पाया (पाद) कहलाता है। उन पायों को धातु के अनुसार कल्पित किया जाता है। अर्थात् सोने का पाया, चाँदी का पाया, ताँवे का पाया व लोहे का पाया।

चन्द्रमा कुण्डली के जिस भाग में स्थित हो, उसके अनुसार ही पाया जाना जाता है। धातु सम्बन्धी नामकरण सहित पायों का विभाजन इस तरह है :

सोने का पाया—जन्म कुण्डली में यदि चन्द्रमा पहले, छठे या ग्यारहवें स्थान में हो तो सुवर्णपाद (सोने का पाया) में वालक का जन्म समझा जाता है।

चाँदी का पाया—चन्द्रमा यदि दूसरे, पाँचवें व नौवें भाव में हो तो वालक का जन्म रजतपाद (चाँदी के पाये) में मानना चाहिए।

ताँबे का पाया—चन्द्रमा तीसरे, स तवें व दसवें स्थान में हो तो ताम्रपाद (तांबे के पाये) में बालक का जन्म समझना चाहिए।

लोहे का पाया—यदि चन्द्रमा चौथे, आठवें या वारहवें स्थान में हो तो वालक का जन्म लौह पाद (लोहे के पाये) में होता है।

चाँदी के पाये में जन्म होने पर शिशु को भाग्यवान् समझा जाता है। अपनी श्रेष्ठता में चाँदी का पाया सर्वोत्तम है। श्रेष्ठता के तारतम्य से इसके वाद ताँबे के पाये का क्रम आता है। अर्थात् यह पाया भी अच्छा व शुभ होता है, लेकिन चाँदी के पाये की अपेक्षा हीन होता है।

शेप दो पाये सोने व लोहे के अच्छे नहीं समझे जाते हैं।

श्रेष्ठता क्रम में सोने का पाया तीसरे नम्बर पर तथा लोहे का पाया चतुर्थ नम्बर पर निकृष्ट समझा जाता है।

चन्द्रमा को जन्मपत्री में प्राण कहा गया है। अतः चन्द्रमा की अच्छी या बुरी स्थिति से बालक के अरिष्ट या शुभ का विचार किया जाता है। साधारणतः चौथे, आठवें व बारहवें चन्द्रमा को अशुभ माना गया है। कदाचित् इसके पीछे यही रहस्य है। वैसे हम अरिष्ट भंग के संदर्भ में 6-8 स्थानों में चन्द्रमा को अत्यन्त शुभ बता चुके हैं। उस अपवाद को भी ध्यान में रखें।

(2) गण्डमूल विचार :—

इसका शास्त्रीय नाम 'गण्डान्त' है। गण्ड से तात्पर्य है—निकृष्ट। तिथि, लग्न व नक्षत्र का कुछ भाग 'गण्डान्त' कहलाता है। अतः तिथि गण्डान्त, लग्न गण्डान्त व नक्षत्र गण्डान्त माने जाते हैं। सामान्य धारणा है कि गण्डान्त में पैदा हुआ बालक अधिक जीवित नहीं रहता अथवा कष्ट से जीवित रहता है। 'सारावली' नामक पुस्तक में कहा गया है—

'गण्डान्त में पैदा होने वाला बालक प्रायः जीवित नहीं रहता है। यदि भाग्यवश जीवित रह जाय तो माता के लिए कष्ट कारक होता है तथा स्वयं बहुत धन सम्पत्ति व वैभव वाला होता है।'

अतः गण्ड बालक को सदा अशुभ ही नहीं समझना चाहिए। यहाँ हम तीनों गण्डान्तों का परिचय दे रहे हैं तथापि इनमें से नक्षत्र गण्डान्त को ही विशेष महत्त्व का सर्वाधिक प्रभावशाली माना जाता है।

(क) प्रतिपदा, षष्ठी व एकादशी की शुरू की एक घड़ी (24 मिनट) तथा पूर्णिमा, पंचमी व दशमी की अन्त की एक घड़ी 'तिथि गण्डान्त' कहलाता है।

(ख) मीन लग्न के अन्त की आधी घड़ी और मेष की शुरू की आधी घड़ी, कर्क के अन्त व सिंह के शुरू की आधी-आधी घड़ी, वृश्चिक के अन्त व धनु के शुरू की आधी-आधी घड़ी 'लग्न गण्डान्त' कहलाता है।

(ग) रेवती, ज्येष्ठा व आश्लेषा की अन्त की दो-दो घड़ियाँ (48 मिनट) अश्विनी, मघा व मूल के शुरू की दो-दो घड़ियाँ 'नक्षत्र गण्डान्त' कहलाती हैं।

इनमें उत्पन्न बालक को विशेष रूप से अनिष्टकारी समझा जाता है। यदि अरिष्ट भंग योग व आयु योग तथा चन्द्र बृहस्पति की स्थिति सुदृढ़ हो तो बालक जीवित अवश्य रहता है।

सामान्यतः अश्विनी, आश्लेषा, मघा, ज्येष्ठा, मूल व रेवती ये 6 नक्षत्र गण्डमूल कहलाते हैं। इनमें चरण विशेष में पैदा होने पर अलग-अलग फल होता है। इनमें यदि बालक का जन्म हो तो मूल शान्ति करायी जाती है तथा जन्म से सत्ताईसवें दिन में जब पुनः वही नक्षत्र आ जाता है तो स्नान विधानपूर्वक जप समाप्ति व हवन आदि किया जाता है।

इनमें से श्लेषा, ज्येष्ठा व मूल ये तीन विशेष प्रभावशाली माने जाते हैं—

	नक्षत्र की घड़ियां	योग	फल
(क) आश्लेषा	पहली 5 घड़ी	=5	सुख भोग
	6 घड़ी से 12 घड़ी तक	=12	पिता को कष्ट
"	आगे 2 घड़ी	=14	माता को कष्ट
"	आगे 3 घड़ी	=17	कामी
"	आगे 4 घड़ी	=21	पितृ सम्मान
"	आगे 8 घड़ी	=29	शक्तिमान

,,	आगे 11 घड़ी=40	आत्मनाश
,,	आगे 6 घड़ी=46	त्यागी
,,	आगे 9 घड़ी=55	सुखी
,,	आगे 5 घड़ी=60	धनी

यदि भभोग 60 घड़ी से ऊपर हो तो उसके उसी अनुपात में हिस्से कर लेने चाहिएं।

(ख) यदि **ज्येष्ठा नक्षत्र** में जन्म हो तो प्रथम चरण बड़े भाई को अशुभ होता है, दूसरे चरण में छोटे भाई का नाश होता है। तीसरे चरण में माता को कष्ट तथा चौथे चरण में पिता को कष्ट होता है।

(ग) मूल नक्षत्र का चरणानुसार फल इस तरह है—पहले चरण में पितृ कष्ट, दूसरे चरण में माता को कष्ट, तीसरे चरण में धन हानि तथा चौथे चरण में शान्ति करने से सुख होता है।

इस नक्षत्र का विशेष विचार करने के लिए घड़ियों के अनुसार भी फल देख लेना चाहिए। पहली 8 घड़ी में मूल नाश, आगे की 6 घड़ियां धन नाशक, आगे की 11 घड़ियों में भाई का नाश, आगे की 9 घड़ियों में माता को कष्ट, अगली 14 घड़ी परिवार की हानि करने वाली, अगली 5 घड़ियाँ वैभव देने वाली, अगली 4 घड़ियाँ राज-सम्मान देने वाली, तथा अन्तिम 3 घड़ियाँ आयु कम करने वाली होती हैं।

मूल का निवास स्थान—वैशाख, ज्येष्ठ, मार्गशीर्ष (अगहन) फाल्गुन में मूल का वास पाताल में होता है। आषाढ़, आश्विन, भाद्रपद, माघ में स्वर्ग में होता है। तथा चैत्र, श्रावण, कार्तिक, पौष में मूल भूमि पर रहता है।

जन्म समय, पाताल या स्वर्ग में यदि मूल का वास हो तो

सदा शुभ फल समझना चाहिए। यदि जन्म समय भूमि पर वास हो तो ऊपर बताए गए तरीके से घड़ियों व चरणों के अनुसार शुभाशुभ फल समझना चाहिए।

(घ) अश्विनी नक्षत्र के पहले चरण में जन्म हो तो पिता को कष्ट, दूसरे चरण में सुख लाभ, तीसरे चरण में राजपद लाभ तथा चौथे चरण में राजा के समान शक्ति मिलती है।

(ङ) मघा के पहले चरण में जन्म होने पर मामा नाना के कुल को हानि, दूसरे चरण में पिता को भय, तीसरे चरण में सुख लाभ तथा चौथे चरण में उत्तम विद्या बुद्धि होती है।

(च) रेवती नक्षत्र के पहले चरण में जन्म होन पर बालक राजा तुल्य, दूसरे में राजपदाधिकारी, तीसरे में सुख ऐश्वर्य तथा चौथे चरण में कष्ट होता है।

इस तरह बालक का गण्ड मूल फल जानना चाहिए। इन नक्षत्रों में उत्पन्न बालक बोलचाल में 'मूलिया' या 'मूला' कहे जाते हैं।

अभुक्त मूल विचार—ज्येष्ठा नक्षत्र के अन्त की आधी घड़ी तथा मूल की शुरू की आधी घड़ी कुल मिलाकर 1 घड़ी (24 मिनट) का लगातार समय 'अभुक्त मूल' कहलाता है। किन्हीं आचार्यों के मतानुसार दोनों नक्षत्रों की 4-4 घड़ियाँ इसी ढंग से अभुक्त कहलाती हैं। वैसे आधी घड़ी वाला मत ही ज्यादा प्रामाणिक लगता है।

इस समय में उत्पन्न होने पर गण्ड नक्षत्र का फल विशेष रूप से होता है। (चाभुक्तर्क्षे विशेषतः) अतः इस समय में उत्पन्न बालक का शान्ति के बाद 27 दिन बीतने पर ही पिता मुख देखे। कहा जाता है कि गोस्वामी तुलसीदास इन्हीं अभुक्त घड़ियों में उत्पन्न हुए थे, अतः उनके पिता ने उन्हें त्याग दिया

था। हमारा विचार है कि त्याग करना अच्छी बात नहीं है, हाँ, शान्ति आदि कराकर ऐसे बालक को भी स्नेह से पालना चाहिए। ज्योतिष शास्त्र की उक्ति है कि 'जीवेच्च धनवान् भवेत्।' अर्थात् जिएगा तो धनवान् होगा।

(3) मंगलीक विचार :—

मंगल की विशेष स्थिति से मंगलीक विचार किया जाता है। जन्म कुण्डली में यदि मंगल लग्न, चतुर्थ, सप्तम, अष्टम तथा द्वादश (1-4-7-8-12) स्थानों में हो तो लड़का या लड़की मंगल दोष से युक्त समझे जाते हैं। विवाह के समय इसीलिए मंगली लड़के का मंगली लड़की से ही सम्बन्ध करने का आग्रह लोगों में देखा जाता है। दोनों दोषयुक्त पक्षों का सम्बन्ध शुभ होता है अर्थात् ऋण × ऋण = धन हो जाता है। यदि एक की कुण्डली में मंगल दोष हो तथा दूसरे की कुण्डली में (1-4-7-8-12) स्थानों में शनि, राहु पड़ जाय तो भी दोनों का सम्बन्ध शुभ समझा जाता है।

इसी तरह मंगलीक विचार चन्द्र कुण्डली से भी करना आवश्यक है। यदि लग्न में मंगल उक्त स्थानों में नहीं हो; किन्तु चन्द्र लग्न में इन्हीं स्थानों में हो तो भी मंगल का दोष माना जाएगा। मंगल किस स्थान में है? इसका शुद्ध निर्णय पीछे बताए गए 'भाव मध्य चक्र' के आधार पर ही करना चाहिए।

मंगलीक दोष का अपवाद :—

(i) यदि इन्हीं स्थानों (1-4-7-8-12) में एक की कुण्डली में मंगल हो तथा दूसरे की कुण्डली में शनि, राहु या स्वयं मंगल हो तो 'मंगल दोष' नहीं होता है।

(ii) यदि बलवान् गुरू या शुक्र लग्न में अथवा सप्तम स्थान में हो तो मंगल दोष नहीं होता।

(iii) यदि मंगल नीच राशि, शत्रुराशि में हो या अस्त वा वक्री हो तो उक्त दोष नहीं होता।

(iv) केन्द्र व त्रिकोण स्थानों में शुभ ग्रह तथा (3-6-11) स्थानों में अशुभ ग्रह हों तो 'मंगलदोष' नहीं होता।

(v) यदि सप्तमेश सातवें स्थान में ही हो तो भी 'मंगल दोष' नहीं होता है।

(4) एक नक्षत्र जन्म फल :—

एक नक्षत्र में ही माता पिता व सन्तान का जन्म अशुभ होता है। यदि एक ही नक्षत्र में दो भाई बहनों का जन्म हो तो अशुभ होता है। दोनों में से एक को मृत्युतुल्य कष्ट होता है।

(5) त्रिखल (तेखड़ा) विचार :—

यदि किसी के यहाँ तीन लड़कियों या तीन लड़कों के वाद सन्तान का लिंग वदल जाए तो त्रिखल दोष होता है। आशय यह है कि तीन लड़कियों के बाद लड़का हो अथवा तीन लड़कों के वाद लड़की हो तो यह दोष है। जनभाषा में इसे (तेखड़ा) कहते हैं। मूल शान्ति की तरह इसकी भी शान्ति करायी जाती है।

(6) कार्तिक मास में बालक का जन्म अशुभ होता है—

कार्तिक (सौरमास) में यदि स्त्री को प्रसव होता है तो अशुभ माना जाता है। शास्त्रों में जीवधारियों के लिए कुछ निषिद्ध (अशुभ) प्रसव मास वताए गए हैं। कार्तिक में मनुष्य को सन्तान होने पर कुल नाश होता है। इसके लिए कार्तिक शान्ति का विधान है।

कुछ अन्य प्राणियों के लिए अशुभ सन्तानोत्पत्ति मास ये हैं—
माघ (मकर संक्रान्ति) भैंस, सिंह सौरमास में गाय, कर्क सौरमास में घोड़ी, धनुमास में बकरी तथा वृश्चिक मास में

हथिनी का प्रसव मालिक के लिए अशुभ होता है।

(7) ज्वालामुखी योग :—

ज्योतिष शास्त्र में विशेष तिथि और नक्षत्रों के मिलने पर कुछ बुरे योग कहे गए हैं। इन योगों में भी जो सबसे अधिक ताक़तवर तथा सर्वनाश करने वाले योग हैं उन्हें 'ज्वालामुखी योग' कहा गया है। जिस प्रकार ज्वालामुखी के फूटने से आस-पास की सारी जीवराशि नष्ट हो जाती है, उसी तरह इन ज्वालामुखी योगों में किए गए कार्य नाश करने वाले माने जाते हैं। ये ज्वालामुखी योग पाँच हैं—

(क) प्रतिपदा तिथि को मूल नक्षत्र होने पर।
(ख) पंचमी तिथि को भरणी नक्षत्र होने पर।
(ग) अष्टमी तिथि को कृत्तिका नक्षत्र होने पर।
(घ) नवमी तिथि को रोहिणी नक्षत्र होने पर।
(ङ) दशमी तिथि को श्लेषा नक्षत्र होने पर।

उपर्युक्त पाँचों कुयोगों में जो कार्य होता है वह निष्फल समझना चाहिए। बच्चा पैदा हो तो जीवित न बचे तथा नारी चूड़ियाँ पहनें तो विधवा हो जाय एवं फसल बोए तो फसल नष्ट हो जाय। आशय यह है कि जो भी काम किया जाय वही असफल हो। इस विषय में ज्योतिषी लोगों में निम्नलिखित उक्ति प्रसिद्ध है—

प्रतिपद में तज मूल को, पंचम भरणी भार।
अष्टमी कृत्तिका, रोहिणी नवमी तिथि विचार॥
दशमी श्लेषा को तजो कहता हूं में साँच।
बुरे तिथि नक्षत्र ये ज्वालामुखी योग हैं पाँच॥
जन्मे सो जीवै नहीं, बसै तो उजड़ होय।
नारी पहने चूड़ियाँ निज पति को दे खोय॥

बोए तो काटे नहीं, कुएँ न उपजै नीर।
ये ज्योतिष की सूक्तियाँ, धरो हृदय में वीर।।

यदि उक्त योगों में बालक का जन्म हो तथा अरिष्ट भंग योग नहीं हो तो बालक के जीवन का क्षय अवश्य होता है। लेकिन योग विचार के साथ ही कुण्डली में भी आयु, मारक व अरिष्ट का विचार करना आवश्यक है। सामान्य ज्योतिषी केवल ज्वालामुखी जैसे कुयोगों का विचार करके शेष कुण्डली देखे विना ही अशुभ फलादेश कर देते हैं, यह सर्वथा अशुद्ध है। अनुभव में आया है कि ज्वालामुखी या अन्य बुरे योगों में पैदा होने पर भी बालक अन्य ज्योतिषीय कारणों से जीवित मिले हैं। अतः निष्कर्ष यह है कि बुरे ग्रह योगों के साथ तिथि नक्षत्र के कुयोग भी मिल जाएं तब तो बड़ा अनिष्ट हो जाता है, लेकिन अकेले तिथि नक्षत्र योग पूरी तरह ध्वंस करने में समर्थ नहीं होते।

(8) अमावस्या व चतुर्दशी तिथि में जन्म :—

सामान्यतः कृष्णपक्ष की चतुर्दशी व अमावस्या में बालक का जन्म हो तो अशुभ व अरिष्टकारक माना जाता है। अमावस्या में जन्म हो तो स्त्री, पुत्र, कुल, धन आदि की हानि होती है। इसके लिए शास्त्रोक्त पूजा विधान अवश्य कर लेना चाहिए। इसी तरह कृष्ण चतुर्दशी के सारे मान (तिथि भोग) को 6 से भाग कर बराबर 6 भाग कर लेने चाहिएं। यदि कृष्ण चतुर्दशी का मान 60 घड़ी ही हो तो 10 घड़ी का एक-एक भाग होगा। अधिक या कम मान होने पर स्वयं बराबर विभाग कर लेने चाहिएं।

पहले भाग में जन्म होने से शुभ समझा जाता है। अर्थात् कृष्ण चतुर्दशी की पहली लगभग (10 घड़ियों में जन्म हो तो शुभ होता है। शेष सभी पाँचों विभागों में क्रमशः पिता, माता,

मामा, कुल व धन का नाश होता है।

(9) जन्म समय के कुछ अन्य अशुभ योग :—

(क) क्षय तिथि में जन्म होने पर कुल नाशक योग होता है। अर्थात् जिस दिन तिथि का क्षय (घटना) हो तथा उस घटी हुई तिथि में ही बालक का जन्म हो तो महा अशुभ होता है।

(ख) व्यतिपात गण्ड, अतिगण्ड, वज्र, व्याघात, वैधृति, शूल, परिघ यमकण्टक योग में जन्म होने पर भी महा अशुभ होता है। ये योग पीछे पंचांग परिचय (विषय प्रवेश) शीर्षक के अन्तर्गत विष्कुम्भादि 27 योगों में गिनें गए हैं तथा प्रतिदिन का योग पंचांग से सरलता से जाना जा सकता है।

(ग) क्षय मास में बालक का जन्म अशुभ होता है।

(घ) भद्रा (विष्टि) करण में जन्म कष्टप्रद होता है।

(ङ) संक्रान्ति के दिन सूर्य ग्रहण या चन्द्रग्रहण के समय जन्म लेना कुल के लिए बहुत अशुभ फल करने वाला होता है।

सभी प्रकार के गण्ड योगों में जन्म होने पर पूजा विधान करना चाहिए। कहा गया है कि जिस तरह सांप का विष मन्त्र के सुनने से विलीन हो जाता है उसी तरह गण्ड दोष भी शान्ति विधान करने से नष्ट हो जाता है !

यथा सर्पविषश्चैव मन्त्रश्रवणाद् विलीयते।
तथैव गण्डदोषोऽपि विधानेन विलीयते ॥

(10) अशुभ योगों का कुफल निवारण

जिस तरह सूर्य तपता है। वर्षा होती है, गर्मी, सर्दी, बरसात तूफान, बाढ़ आदि प्राकृतिक नियमानुसार इस संसार में आते हैं, उसी तरह यह प्राकृतिक नियम है कि ग्रह अपने शुभ या

अशुभ फल को परिस्थिति के अनुसार प्राणियों को अवश्य देंगे। प्राकृतिक विपदाओं से बचने के लिए मानव सदा से सुरक्षात्मक उपाय करता रहा है। तथा नित्य निरन्तर नए उपायों की भी खोज जारी है। उन सबके करने से जिस तरह प्राकृतिक प्रकोपों के सीधे कुप्रभाव से बचा जा सकता है, उसी तरह से उपाय करने से ग्रहों के कुप्रभाव को भी यथासंभव कम करना सरल है। इसी दृष्टिकोण से विद्वान अचार्यों ने शास्त्रों में 'अरिष्ट शान्ति या ग्रह शान्ति का विधान किया हैं। सरल शब्दों में कहा जाता है कि जो ग्रह आपके लिए किसी समय विशेष कष्ट कारक या अनिष्ट कारक हो रहे हों, उनके लिए कुछ दान, जप, व्रत अथवा पत्थर आदि धारण करने से काफी हद तक उनके कुप्रभाव को कम किया जा सकता है। यहां हम सभी ग्रहों के लिए दान की वस्तुएं, मणि (पत्थर), जप का मन्त्र तथा जप मन्त्र कितना करें, ये सब जानकारी दे रहे हैं। इससे पाठक अवश्य लाभ उठाएंगे। ग्रहों की सम्बन्धित मणियां विधिपूर्वक धारण करने से प्रत्यक्ष फल का अनुभव किया जा सकता है।

सूर्य

दान—गेहूं, तांबा, घी मसूर, गुड़, कुंकुम, लाल कपड़ा, कनेर के फूल, लाल कमल, बछड़े सहित गौ तथा सोना इन सबका अथवा जितनी वस्तुएं उपलब्ध हों, उनका यथाशक्ति दान करें।

मन्त्र—'ॐ घृणिः सूर्याय नमः' इस मन्त्र का 7000 जप करके आक की लकड़ी से हवन करना चाहिए।

मणि—माणिक (लाल) सोने में दाएं हाथ की अनामिका (Ring finger) में पहनें।

चन्द्रमा

दान योग्य वस्तुएँ—सफेद कपड़ा, मोती, चांदी, चावल खाँड, चीनी, दही, शंख, सफेद फूल, सफेद वृषभ (साँड)।

मन्त्र—'ॐ स्वौं सोमाय नमः'।

इसका जप 11000 करना चाहिए तथा ढाक की लकड़ी से हवन कराना चाहिए।

मणि—सफेद शुद्ध मोती चांदी में मढ़वा कर दाएँ हाथ की अनामिका में पहनें।

मंगल

दान वस्तु—मसूर, गुड़, घी, लाल कपड़ा, गेहूं, लाल फूल, तांबा केसर।

मन्त्र—'ॐ अं अंगारकाय नमः'।

इसका जप 10000 करके खैर (खदिर) की लकड़ी से हवन करना चाहिए।

मणि—मूंगा सोने या तांबे में पहनना चाहिए।

बुध

दान वस्तु—मूंग, खाँड, घी, हरा कपड़ा, चाँदी, फूल, काँस का बर्तन, हाथी दाँत, कपूर।

मन्त्र—'ॐ बुं बुधाय नमः'।

इस मन्त्र का 19000 जप करके चिरचिटा (अपामार्ग) की लकड़ी से हवन करना चाहिए।

मणि—पन्ना (मरकत मणि) चाँदी या सोने में बनवाकर छोटी अंगुली में पहनना चाहिए।

गुरु

दान वस्तु—चने की दाल, कच्ची शक्कर, हल्दी, पीला

कपड़ा, पीला फूल, घी, सोना।

मन्त्र—'ॐ बृं बृहस्पतये नमः'।

इस मन्त्र का 19,00 जप करना चाहिए तथा पीपल की लकड़ी में हवन करना चाहिए।

मणि—पुखराज को सोने में बनवाकर अंगूठे के पास वाली अंगुली (तर्जनी) में, अथवा अनामिका में पहनना चाहिए।

शुक्र

दान वस्तु—चाँदी, चावल, दूध, सफेद कपड़ा, घी, सफेद फूल, खुशबूदार धूप या अगरबत्ती, सफेद चन्दन।

मन्त्र—'ॐ शुं शुक्राय नमः'।

इस मन्त्र का जप 6000 करके गूलर की लकड़ी से हवन करना चाहिए।

मणि—हीरा किसी सफेद धातु (प्लेटिनम) में पहनना चाहिए।

शनि

दान वस्तु—काला कपड़ा, साबुत उड़द, लोहा, अलसी, तेल, सन (जूट), काला पुष्प, कस्तूरी, काला तिल, काला कम्बल।

मन्त्र—'ॐ शं शनैश्चराय नमः'।

इसका जप 23000 करके शमी (जांड) की लकड़ी से हवन करना चाहिए।

मणि—नीलम, चाँदी या सप्तधातु में बनवा कर बाएं हाथ की बड़ी अंगुली में पहनना चाहिए।

राहु

दान वस्तु—काला तिल, तेल, उड़द, कुलथी (गहत) सरसों दाना, राई, नीला कपड़ा, काला फूल, काला नीला कम्बल या

ऊनी कपड़ा ।

मन्त्र—'ॐ रां राहवे नमः' ।

इस मन्त्रका जप 18000 करके दूब (घास) सहित आम की लकड़ी से हवन करना चाहिए ।

मणि—गोमेद को चांदी या अष्टधातु में बनवाकर बाएं हाथ की लम्बी अंगुली में पहने ।

केतु

दान वस्तु—सात अनाज, काजल, झंडी, ऊनी कपड़ा, तिल बकरा ।

मन्त्र—'ॐ कें केतवे नमः' ।

इस मन्त्र का 17000 जप कर कुशा (डाव, कांस) मिश्रित आम की लकड़ी से हवन करना चाहिए ।

मणि—लहसुनिया (cat's-eye) चांदी, तांबे या अष्टधातु में बनवाकर बाएं हाथ की लम्बी अंगुली अथवा अनामिका में पहने ।

ग्रह की प्रसन्नता के लिए दान योग्य वस्तुओं में से यदि कुछ वस्तुएँ उपलब्ध न हों अथवा सामर्थ्य न हो तो यथाशक्ति वस्तुओं का दान करना चाहिए ।

हवन के लिए जो लकड़ी बताई गई हैं वास्तव में उन उन ग्रहों की वे समिधाएँ हैं । यदि वे उपलब्ध न हो सकें तो आम पीपल या गूलर की लकड़ी से हवन किया जा सकता है तथा सम्बन्धित ग्रह की समिधा की कुछ आहुतियां देनी चाहिएं ।

यदि तुरन्त मणि का प्रबन्ध न हो सके अथवा सामर्थ्य न हो तो ग्रहों की सम्बन्धित धातु की अंगूठी या छल्ला ही बनवा कर निर्दिष्ट अंगुलियों में पहन लेना चाहिए ।

यदि कोई इन तन्त्रोक्त मन्त्रों के स्थान पर वैदिक मन्त्रों

का प्रयोग करना चाहें तो कोई हानि नहीं है। मन्त्र की जप संख्या उस स्थिति में भी पूर्ववत् रहेगी।

यद्यपि जप, हवन, दान, व मणिधारण इन सबके करने से पूर्णफल मिलता है; लेकिन आजकल के व्यस्त जीवन में यदि कोई व्यक्ति एक ही कार्य करना चाहे तो उसे मणि या धातु धारण कर लेनी चाहिए। मणि शीघ्र व सबसे अधिक प्रभावकारी होती है। इसकी विकरण क्षमता (Radio activity) शरीर की तंरगों के साथ मिलकर तुरन्त फल देने में समर्थ होती है।

वैसे महामृत्युंजय जप, दुर्गा सप्तशती पाठ अथवा हनुमान चालीसा या हनुमान बाहुक का नित्य पाठ अथवा आयोजित पाठ जप आदि कराने से सामान्यतः सभी अनिष्ट दूर हो जाते हैं।

॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥

०८०